शैक्षणिक

संदर्भ

वर्ष:8 अंक:41 (मूल क्रमांक 98)
मई-जून 2015 मूल्य: ₹ 30.00

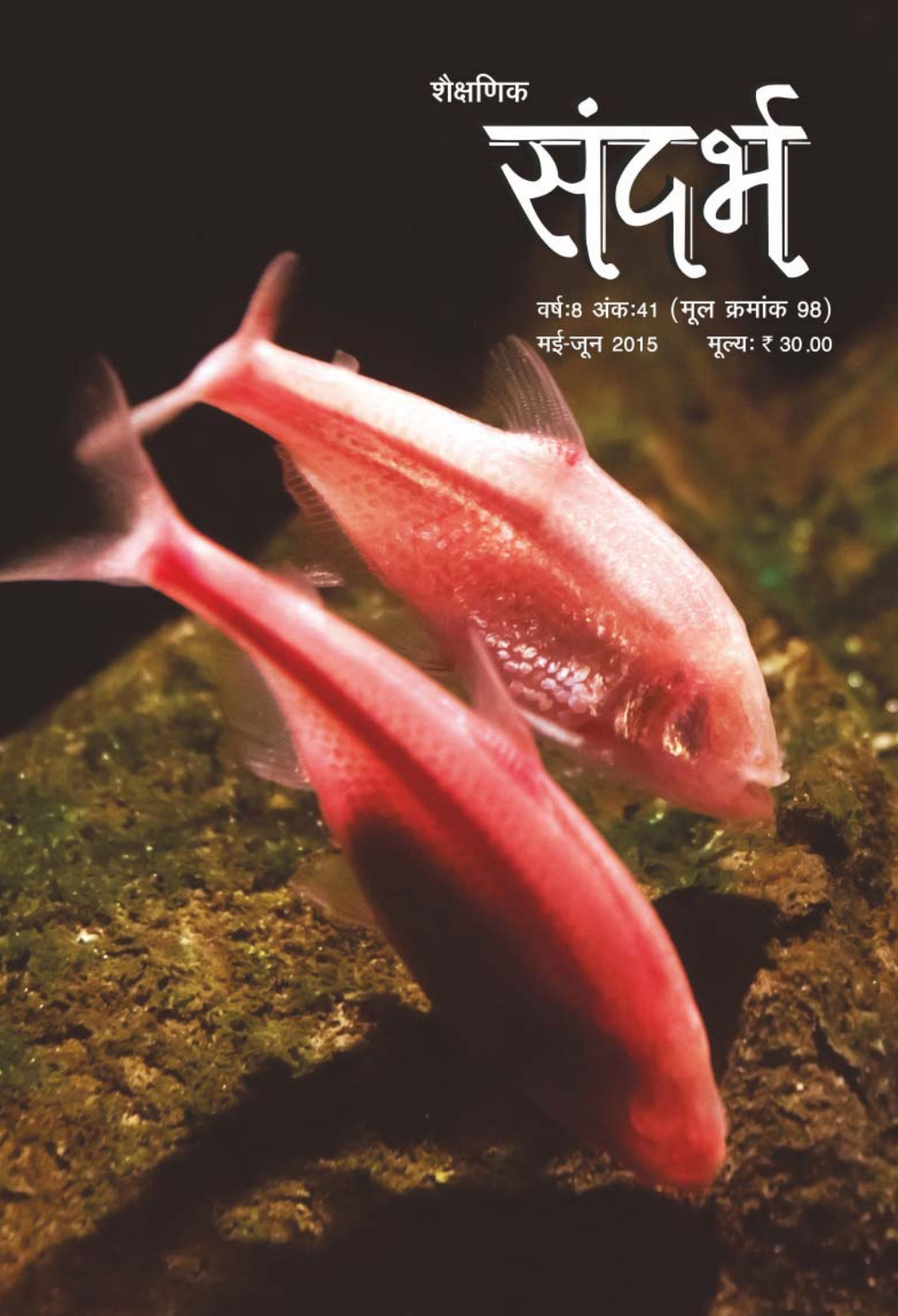

सम्पादन
राजेश खिंदरी
माधव केलकर
सहायक सम्पादक
पारुल सोनी
अम्बरीष सोनी
विनता विश्वनाथन
सम्पादकीय सहयोग
रश्मि पालीवाल
सुशील जोशी
रुस्तम सिंह
उमा सुधीर
आवरण
राकेश खत्री
प्रोडक्शन एवं डिज़ाइन
कनक शशि
कमलेश यादव
इन्दु नायर
वितरण
झनक राम साहू

शैक्षणिक
संदर्भ
शिक्षा की द्वैमासिक पत्रिका
वर्ष:8 अंक:41 मई-जून 2015
(मूल क्रमांक 98)

एक प्रति का मूल्य
व्यक्तिगत : ₹ 30.00
संस्थागत : ₹ 60.00

सम्पादन एवं वितरण
एकलव्य, ई-10, बी.डी.ए. कॉलोनी,
शंकर नगर, शिवाजी नगर,
भोपाल, म. प्र. 462 016
फोन : 0755 - 255 1109, 267 1017
www.sandarbh.eklavya.in
सम्पादन- sandarbh@eklavya.in
वितरण- circulation@eklavya.in

सदस्यता	एक साल (6 अंक)	तीन साल (18 अंक)	आजीवन
व्यक्तिगत	150 रुपए	400 रुपए	2500 रुपए
संस्थागत	300 रुपए	750 रुपए	5000 रुपए

मुखपृष्ठः एस्टियानैक्स मैक्सिकनस मछली का चित्रः एस्टियानैक्स मैक्सिकनस मछली गुफाओं में पाए जाने वाले अपने विशिष्ट प्रकार के लिए प्रसिद्ध हैं। इन्हें गुफाओं वाली अन्धी मछली या ब्लाइंड केवफिश के नाम से जाना जाता है। ये मछलियाँ अपनी दृष्टि यानी देखने की क्षमता लगभग खो चुकी हैं। यहाँ तक कि कुछ में तो आँखें ही नहीं होतीं। छत्तीसगढ़ की कोटमसर गुफाओं में भी कुछ ऐसी मछलियाँ पाई जाती हैं जिनकी देखने की क्षमता बहुत क्षीण हो गई है। इन पर विस्तार से पढ़ें लेख पेज 5 पर।

पिछला आवरण - पेरू, अमेज़न के जंगलों में पाए जाने वाले लम्बे पेड़ों की पुश्ता (buttress) जड़ें: ये बहुत ही बड़ी, उथली, उभरी जड़ें होती हैं। इस तरह की जड़ें आम तौर पर पोषक तत्वों की कमी से जूझते वर्षा वनों की मिट्टी में पाई जाती हैं। ये जड़ें ज़मीन के ज़्यादा भीतर प्रवेश नहीं करतीं। वर्षा वनों में पेड़ों के गिरने का खतरा सदैव बना रहता है, ऐसे में ये पुश्ता जड़ें पेड़ों को स्थिर बने रहने में मदद करती हैं। इससे सम्बन्धित लेख पढ़िए पृष्ठ 25 पर।

Link Cover 1 : http://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/5/51/Astyanax_mexikanus_blind_trio.jpg
Cover 3 : http://voyager.jpl.nasa.gov/spacecraft/images/spacecraft_highres.jpg
Cover 4 : http://http://www.jtl.us/wp/wp-content/uploads/buttress-roots-eastern-amazon-ecuador-1920x1080.jpg

इस अंक में उन सब चित्रों के स्रोत जिनके बारे में चित्र या लेख के साथ उल्लेख नहीं है, इंटरनेट की विविध वेबसाइट हैं।

संदर्भ का सौवाँ अंक करीब है!

इस मौके पर हम प्रकाशित करेंगे एक किताब
*जो संदर्भ के सभी ग्राहकों के लिए होगी उपहार**

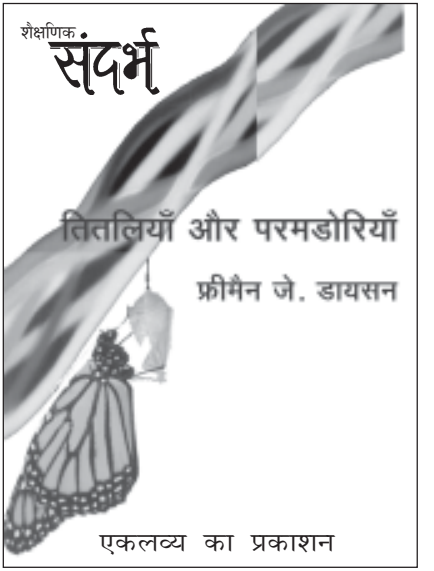

*उपहार उन सभी ग्राहकों के लिए जिनकी सदस्यता अक्टूबर 2015 के बाद समाप्त हो रही है।

सदस्यता	एक साल	तीन साल	आजीवन
व्यक्तिगत	150 रुपए	400 रुपए	2500 रुपए
संस्थागत	300 रुपए	750 रुपए	5000 रुपए

जल्दी कीजिए

31 अक्टूबर 2015 तक
लीजिए नई सदस्यता
करवाइए सदस्यता नवीनीकरण
सदस्यता लेना हुआ आसान, Pitara kart *पर ऑर्डर करें।*

05

अन्धेपन का जैव-विकास

अपने आसपास दिखाई देने वाले विविध जीवों का वर्तमान स्वरूप सतत् जैव-विकास यात्राओं से गुज़र कर यहाँ तक पहुँचा है। किसी भी जीव के विकास में उसके तात्कालिक प्राकृतवास की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। एक ही प्रजाति के जीव जो अलग-अलग जैव परिस्थितियों में पीढ़ी-दर-पीढ़ी विकसित होते हैं एक दम भिन्न गुणों, शारीरिक रचनाओं और आकार वाले हो सकते हैं। ऐसा ही एक उदाहरण छत्तीसगढ़ की कोटमसर गुफा में पाई जाने वाली *N. evezardi* प्रजाति की मछली का है। इसी प्रजाति की मछलियाँ ओडीशा, तेलंगाना, महाराष्ट्र और नेपाल की नदियों में भी पाई जाती हैं पर इनके शारीरिक गुणों में बहुत अन्तर हैं।

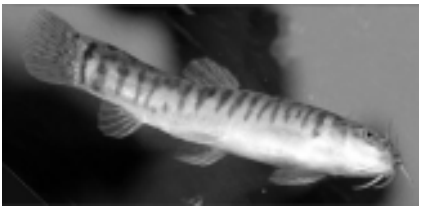

69

पाठ योजनाः विविध मान्यताओं की पड़ताल

पाठ योजनाएँ बनाना सेवा-पूर्व शिक्षक प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम का महत्वपूर्ण हिस्सा होता है। कई लोग इसे बेकार समझ छोड़ देते हैं तो कई ऐसे भी हैं जो पाठ योजना को अपने आप में ही साध्य मानते हैं। हमारी शिक्षा व्यवस्था में शिक्षक का काम जानकारी देना और बच्चों का काम जानकारी लेना है। और ये समस्त जानकारियाँ पुस्तक के अन्दर से और पुस्तक में दिए गए तरीके से सम्पादित की जाती हैं। ज़्यादातर ये पुस्तकीय तरीके ही पाठ योजनाओं का हिस्सा बनते हैं जिन्हें बदला नहीं जा सकता। यह ध्यान रखना ज़रूरी है कि ये साधन मात्र हैं, साध्य नहीं।

शैक्षणिक संदर्भ

अंक-41 (मूल अंक-98), मई-जून 2015

इस अंक में

4 | **आपने लिखा**

5 | **अन्धेपन का जैव-विकास**
विनता विश्वनाथन

13 | **धूप में टँगा धूल का एक कण**
रुद्राशीष चक्रवर्ती

25 | **रोशनी के दर्रे**
ऐड्रियन फोर्सिथ और कैन मियाटा

38 | **टेसू राजा बीच बाज़ार**
रवि कान्त

44 | **सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के बहाने**
दिलिप चुघ

50 | **बच्चों के सवाल**
केवलानन्द काण्डपाल

57 | **भाषा शिक्षण: समग्र भाषा पद्धति - भाग 2**
सौरभ रॉय

69 | **पाठ योजना: विविध मान्यताओं की पड़ताल**
शोभा सिन्हा

87 | **सफेद गुड़**
सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

92 | **दर्द निवारक दवाएँ कैसे काम करती हैं?**
सवालीराम

आपने लिखा

शैक्षणिक संदर्भ, अंक 96 में मोहम्मद ज़फर जी का लेख 'जवाब देने से भी ज़रूरी है सवाल पूछना' पढ़ा। लेख बहुत ही पसन्द आया। वास्तव में कक्षा में बच्चों द्वारा सवाल पूछे जाने की अहमियत से इंकार नहीं किया जा सकता।

इस विषय में अपने स्वयं के अनुभव के बारे में कुछ कहना चाहूँगा। मैं गणित का शिक्षक हूँ। कक्षा में गणित के प्रश्न हल करवाते वक्त बिना छात्रों से प्रश्न पूछे मैं एक स्टेप से दूसरे स्टेप में जाता ही नहीं, चाहे कितनी ही देर क्यों न हो जाए। जब छात्र को सिद्धान्त मालूम है, तब उससे जुड़े प्रश्न का उत्तर तो उसे देना ही होगा।

एक बार मैं कक्षा में एक प्रश्न हल करवा रहा था। एक स्टेप पर आकर मैंने एक प्रश्न पूछा ताकि दूसरे स्टेप पर जाया जा सके। पूरी कक्षा में किसी ने जवाब नहीं दिया, जबकि उत्तर उनके ज्ञान की परिधि के भीतर का था। मैंने कहा कि कोई बात नहीं, कल बताना। दूसरे दिन मैंने पूछा, "हाँ, तो उत्तर मिला?" पूरी कक्षा फिर मौन थी। अन्त में चौथे दिन बच्चों ने सवाल का जवाब दिया और मैंने अगले स्टेप की शुरुआत की। तो, बात यह नहीं थी कि बच्चों को उस प्रश्न का जवाब मालूम नहीं था। वे सोचना नहीं चाहते थे।

एक और उदाहरण देखते हैं - कक्षा में बीजगणित का एक समीकरण हल करवाया जा रहा है।

शिक्षक - समीकरण $3x - 5 = x + 2$

हमें हल करना है।

छात्र - यस सर।

शिक्षक - जब x बाईं ओर जाएगा तो उसका चिन्ह ऋणात्मक और -5 दाईं ओर जाएगा तब उसका चिन्ह धनात्मक हो जाएगा। हो जाएगा ना?

छात्र - यस सर।

शिक्षक - $3x - x = 5 + 2$,

अब 3x में x को घटाएँगे तो 2x बचेगा? दाएँ पक्ष में 5 और 2 जुड़ कर 7 हो जाएँगे, ठीक है?

छात्र - यस सर।

शिक्षक - अब $2x = 7$ में 2, 7 के हर में चला जाएगा और इस प्रकार x का मान कितना प्राप्त होगा? 7/2 ठीक है?

छात्र - यस सर।

आप देख रहे हैं कि इस पूरी प्रक्रिया में समूचे वार्तालाप में छात्र का मात्र एक ही कार्य है और वह है, आँखें मूँद कर 'यस सर' कहना।

मेरा कहना है कि जब आप कहते हैं, '3x में x को घटाएँगे तो क्या बचेगा', तब आप थोड़ा रुकिए तो! बच्चे को तो जवाब देने दीजिए। आप स्वयं ही उत्तर क्यों दे देते हैं? छात्र तो 'यस सर' बोलने के लिए तैयार ही बैठा होता है।

यदि हम छात्रों को बोलने का मौका नहीं देंगे तो फिर उनकी समझ मज़बूत किस प्रकार होगी?

मिलिन्द साव
व्याख्याता (गणित),
राजनांदगाँव, छत्तीसगढ़

अन्धेपन का जैव-विकास

विनता विश्वनाथन

छत्तीसगढ़ में जगदलपुर से कुछ दूर, कांगेर घाटी राष्ट्रीय उद्यान में कांगेर नदी के तट पर, सतह से कुछ 35 मीटर नीचे कोटमसर गुफा है। घने जंगलों के नीचे यह भूमिगत गुफा एक कि.मी. से अधिक लम्बी है। गुफा में उतरने के लिए चट्टानों के बीच का रास्ता संकीर्ण है (चित्र-1) लेकिन कोटमसर गुफा अन्दर से विशाल है। कहीं-कहीं उसकी छत 10-15 मीटर ऊँची है और चौड़ाई इससे भी अधिक। इस गुफा में इतना अँधेरा है कि आप अपनी आँखें बन्द या खुली रखें, कोई फर्क नहीं पड़ता। यदि हाथ में पकड़ी टॉर्च को बन्द कर दें तो गुफा के अन्दर एक कदम भी आगे चलना मुश्किल हो जाता है। गुफा में छत से लटकती और ज़मीन पर से उभरती शंकु जैसी विशाल और सुन्दर पथरीली संरचनाएँ हैं (चित्र-2)। ये चूने पर से होकर टपकते हुए पानी में घुले लवण के जमने से बनती हैं।

गुफा में कई जगह पोखर हैं और बरसात के मौसम में यहाँ प्रायः बाढ़ आ जाती है। साल के बाकी महीनों में यहाँ रिसाव का पानी पोखरों में आता रहता है। गुफा के तापमान में अधिक उतार-चढ़ाव नहीं होता - हवा का तापमान सालभर 25ºC से 32ºC के बीच रहता है और पानी का लगभग 22ºC से 30ºC तक। गुफा में इतनी उमस है कि सर्दी के मौसम में भी पसीना छूटता है, और आप गुफा के मुँह से वाष्प निकलती देख सकते हैं। कोटमसर गुफा में ऑक्सीजन की मात्रा बाहर की तुलना में कम है। यह न सोचें कि गहरे अँधेरे, कम ऑक्सीजन और अन्य कठोर परिस्थितियों के कारण यहाँ कोई जीव नहीं रहता, यहाँ भी कई जीव-जन्तु रहते हैं।

कोटमसर गुफा के जन्तु

गुफा की दीवारों पर चिपके छोटे चमगादड़, पोखर में बड़ी-बड़ी आँखों वाला मेंढक और पत्थरों के पीछे छिपे झिनझिनाते हुए झींगुर, सब गुफा के वासी हैं। यहाँ एक जीव, जो काफी प्रख्यात है। वह गुफा के पानी में रहने वाली मछली की एक प्रजाति है जो लगभग अन्धी है। इसका स्थानीय नाम है कानी मछरी। गुफा के पास कोटमसर गाँव के लोगों का कहना है कि उनको 1900 के करीब गुफा का पता चला जब घूमते-घामते कुछ लोग उसके मुँह तक पहुँचे। विज्ञान को इस मछली की जानकारी 1958 में प्राप्त हुई और इसका वैज्ञानिक नाम है *Nemacheilus evezardi* (चित्र-3)।

चित्र-1: कोटमसर गुफा में उतरने का रास्ता

चित्र-2: गुफा की पथरीली संरचनाएँ

एक ही प्रजाति की किस्में

N. evezardi छत्तीसगढ़, ओडीशा, तेलंगाना, महाराष्ट्र और नेपाल की नदियों व पहाड़ी नालों में पाई गई है। लेकिन कोटमसर की कानी मछरी इन बहते पानी वाली नदी-नालों की मछलियों से कुछ अलग है। कानी मछरी *N. evezardi* प्रजाति की एक किस्म है जो खास गुफाओं में पाई जाती है। इस किस्म को हाइपोजीयन फॉर्म कहते हैं (हाइपोजीयन अर्थात् गुफाओं में, भूमिगत रहने वाले)। बाहर की मछलियों के शरीर पर गहरे रंग के लम्बवत पट्टे होते हैं। इनकी तुलना में हाइपोजीयन मछलियाँ, जिनमें कुछ विविधता है, अलग दिखती हैं - इनके शरीर पर पट्टियाँ नहीं होती हैं। इसके अलावा कुछ हाइपोजीयन मछलियाँ बहुत ही हल्के रंग की होती हैं और उनके शरीर पर धब्बे दिखते हैं; इनकी आँखें बाहर की मछलियों की तुलना में छोटी हैं (regressed eyes)। और कुछ मछलियाँ तो रंगहीन (depigmented) होती हैं और इनकी आँखें काफी छोटी होती हैं (चित्र-3)। व्यवहार में भी कानी मछरी नदी-नालों की मछलियों से कुछ अलग है। नालों में रहने वाली *N. evezardi* 5-7 से.मी. लम्बाई की हैं, तल पर रहती हैं और झुण्ड में रहती हैं। दिन भर पत्थरों के नीचे छिपती हैं और सांझ को ये सक्रिय हो जाती हैं। इनकी तुलना में भूमिगत, हाइपोजीयन *N. evezardi* 3-4 से.मी. लम्बाई की हैं और अकेले ही पाई गई

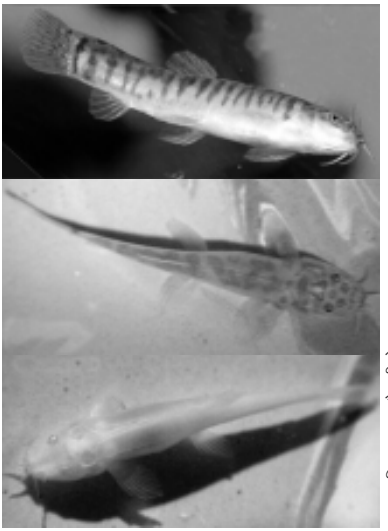

जयन्त बिस्वास व मौशुमी दे

चित्र-3: *Nemacheilus evezardi* की किस्में

हैं। ये गुफा के पोखरों में पत्थरों के बीच ही नहीं, तल की मिट्टी खोदकर भी उसमें छिपती हैं। समय-समय पर पानी की सतह पर आकर हवा के घूँट भरती हैं - शायद इसलिए कि गुफा के पानी में ऑक्सीजन की मात्रा कम है (देखिए बॉक्स)।

कानी मछरी की खोज रायपुर के पण्डित रविशंकर शुक्ल यूनिवर्सिटी के शोधकर्ताओं द्वारा हुई। और आज भी इन मछलियों पर शोध जारी है। बाहर नदी-नालों में रहने वाली मछलियों का व्यवहार दिन-रात के चक्र से ताल-मेल रखता है। आम तौर पर ज़्यादातर जीव ऐसे हैं जो दिन या रात के किन्हीं नियमित समय पर सक्रिय हो

जाते हैं। ये सूर्य की रोशनी के कम-ज़्यादा होने से जुड़ा है। तो एकदम अँधेरे में अपना जीवन बिताने वाली मछलियों को समय का कैसे पता चलता है - कब सक्रीय हों और कब आराम करें? इनके अन्दर की घड़ी कैसे सेट होती है? क्या इन मछलियों के व्यवहार का कोई पैटर्न है? पता लगा है कि ये मछलियाँ भी सांझ के समय सक्रिय होती हैं - ये कैसे होता है? इन सवालों पर और अन्य रोचक सवालों पर कुछ वैज्ञानिक काम कर रहे हैं।

लेकिन इस लेख में हम कानी मछरी के एक ऐसे गुण पर चर्चा करेंगे जिसके कारण वह प्रख्यात हुई है - उसकी बहुत ही छोटी आँखें। अब *N. evezardi* की कोटमसर गुफा में रहने वाली आबादी के सदस्य अपना जीवनकाल इसी गुफा में बिताते हैं। यहीं प्रजनन करते हैं और यहीं मर जाते हैं। मछलियों की इस आबादी का प्राकृतवास (habitat) यही है और ये इसी के प्रति अनुकूलित हैं। आँखों की बात करें तो हमेशा अँधेरे में रहने वाले जीव आम तौर पर दो किस्म के होते हैं – बड़ी-बड़ी आँखों वाले जो कम-से-कम रोशनी भी अपनी आँखों में ले पाते हैं, और छोटी या बिना आँखों वाली मछलियाँ जो किसी अन्य तरीके से अपने पर्यावरण को समझ लेती हैं। कानी मछरी इस दूसरे किस्म की है। लेकिन इसकी आँखें छोटी कैसे और क्यों हुईं?

इन मछलियों के पूर्वज की आँखें थीं। आँखों का होना या न होना, इसे तय करने के कई गुण आनुवंशिक हैं। तो आँखों से सम्बन्धित आनुवंशिक सामग्री में बदलाव के होते ही आँखों में बदलाव हो सकते हैं। गुफा की सामान्य आँखों वाली *N. evezardi* की आबादी में यह कैसे हुआ कि छोटी

मछलियों में ऑक्सीजन हासिल करने के तरीके

ज़्यादातर मछलियाँ पानी में घुली हुई ऑक्सीजन को अपने गिल द्वारा हासिल करती हैं। लेकिन ऐसी भी मछलियाँ हैं जो हवा से ऑक्सीजन हासिल कर सकती हैं। इनमें शामिल हैं कई लंगफिश जिनके फेफड़े हैं। समय-समय पर पानी की सतह पर आकर ये मुँह में हवा भरती हैं ताकि वे कुछ समय के लिए पानी के अन्दर रह सकें। कुछ अन्य मछलियों में हवा और पानी, दोनों से ऑक्सीजन हासिल करने की क्षमता होती है। ये सामान्यतः गिल के ज़रिए पानी से ऑक्सीजन हासिल करती हैं, लेकिन जब पानी में ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है तब पानी की सतह पर आकर मुँह में हवा भरती हैं। इनमें भी कुछ लंगफिश हैं जिनमें गिल और फेफड़े, दोनों होते हैं और कई अन्य मछलियों में गिल और गिल के पास एक अंग होता है जो हवा से ऑक्सीजन सोख सकता है जिसे ऐक्सेसरी रेस्पीरेटरी ऑर्गन कहते हैं।

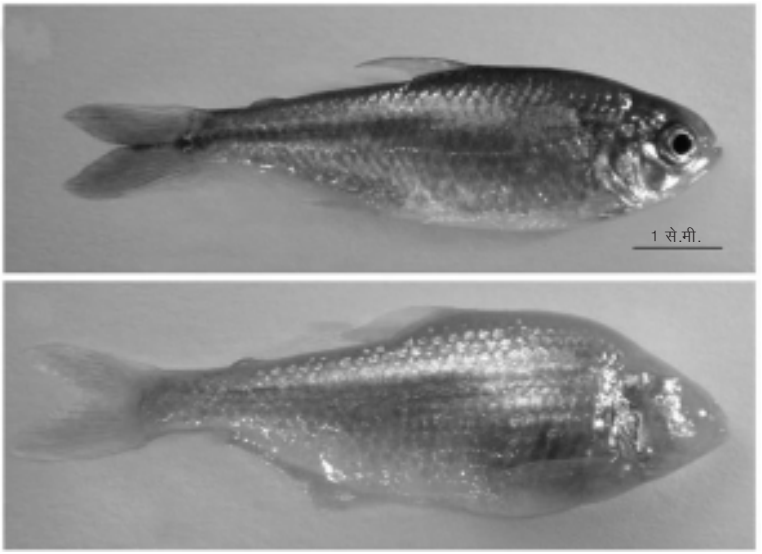

बैथनी एस. स्टॉल

चित्र-3: *Astyanax mexicanus* की दो किस्म - सतही मैक्सीकन टैट्रा (ऊपर का चित्र) व गुफा में रहने वाली मैक्सीकन केवफिश (नीचे का चित्र)।

आँखों वाली मछलियाँ पैदा होने लगीं? किसी अंग का अगर कुछ पीढ़ियों द्वारा उपयोग न हो तो किन कारणों से वह उनके सन्तानों से खो जाता है? यह समझ में आता है कि अँधेरी गुफा में आँखों का उपयोग नहीं, लेकिन मछलियों में वे ऐसे ही क्यों नहीं बनी रहीं?

छोटी आँखों का जैव-विकास

कानी मछरी पर ऐसा शोध हुआ नहीं है जिससे इन सवालों का जवाब मिल जाए। लेकिन भूमिगत गुफाओं के पानी में रहने वाली मछलियाँ अक्सर अन्धी होती हैं। *N. evezardi* की तरह उत्तर अमेरिका में मीठे पानी में पाई जाने वाली एक मछली है - मैक्सीकन टैट्रा, जिसका वैज्ञानिक नाम *Astyanax mexicanus* है। इसकी लगभग 30 हाइपोजीयन किस्में हैं जो गुफाओं के पानी में पाई जाती हैं। इन्हें मैक्सीकन केवफिश कहते हैं और इन सब की आँखें नहीं हैं। शोध-अध्ययनों से पता चला है कि इनकी पूर्वज मछलियों की आँखें थीं, नदियों में रहने वाली वर्तमान *A. mexicanus* की तरह। यानी कि अँधेरी गुफाओं में रहने वाली इन मछलियों ने अपनी आँखें खोई हैं।

मैक्सीकन केवफिश का 1936 में पता चला और उस समय से आज तक इन मछलियों पर काफी शोध हुआ है। 1930 और 1940 के दशकों

में केवफिश और टैट्रा को प्रयोगशाला में साथ पालकर पता चला कि आपस में उनके बच्चे हो सकते हैं। 1970 के दशक में सतही और भूमिगत मछलियों की जेनेटिक जाँच से पता चला कि उनमें इतनी समानताएँ हैं कि वे अलग-अलग जीनस ही नहीं, अलग-अलग प्रजाति की भी नहीं मानी जा सकती हैं - एक ही प्रजाति की ये दो किस्म हैं। बाहर की नदियों से गुफाओं में *A. mexicanus* शायद पास बहने वाली नदियों में बाढ़ के पानी से पहुँचीं। गुफाओं में आने के बाद किन्हीं कारणों से ये सतही मछलियों से कम-से-कम 10 हज़ार सालों से (और 20 लाख सालों तक) अलग रही हैं। इस दौरान इनका विकास हुआ और गुफाओं में रहने वाली मछलियों में कई बदलाव हुए - आँखों का गायब हो जाना, रंग हल्का हो जाना, झुण्ड में न रहना (अकेले रहना) इत्यादि।

A. mexicanus की कुछ आबादियाँ क्यों अन्धी हुईं (और यह बार-बार भूमिगत व गुफाओं की मछलियों में क्यों होता है), इसका अन्दाज़ा लगाया जा सकता है। अन्य शोध से हमें पता है कि आँखों के निर्माण और इस्तेमाल में काफी ऊर्जा की खपत होती है। अँधेरी गुफा में अगर ये काम की नहीं थीं, तो इनको खोना मछलियों के लिए फायदेमन्द था।

यह कैसे हुआ, इसका हाल ही में 2013 में हावर्ड मेडिकल स्कूल के निकलस रोह्नर और उनके साथियों ने पता लगाया है। मैक्सीकन टैट्रा व केवफिश के साझे पूर्वज से केवफिश के विकास को समझने में एक बहुत बड़ी चुनौती थी। वो यह थी कि जब सतही मछलियों की आबादियों में बहुत छोटी आँखों वाली या बिन आँखों वाली मछलियाँ नहीं थीं, तो वे गुफाओं की आबादियों में कैसे आ गईं? हम सब ने पढ़ा है कि जैव-विकास पहले से मौजूद विविधता पर ही काम कर सकता है। तो सवाल था कि हज़ारों-लाखों साल पहले *A. mexicanus* की आबादियों में आँखों के विविध आकार कैसे आए।

रोह्नर और साथियों को अन्य शोध से पता था कि जब प्रयोगशाला में पले कुछ जीवों को किसी तनावपूर्ण वातावरण में लाते हैं तो उनमें छिपी विविधता प्रकट हो जाती है। यह असर कृत्रिम रूप से भी पैदा किया जा सकता है - अगर मछलियों को रैडिसिकॉल नामक दवा की मौजूदगी में पाला जाए। तो पहले प्रयोगशाला में टैट्रा और केवफिश के बच्चों को रैडिसिकॉल दिया गया। रोह्नर ने पाया कि इन मछलियों की अगली पीढ़ी में छोटी-बड़ी, दोनों आकार की आँखें दिखने लगीं। तो यह पता चल गया कि मछलियों में यह विविधता छिपी है। फिर उन्होंने यह देखना चाहा कि सतही मछलियों को नए वातावरण में लाया जाए (जो अक्सर तनावपूर्ण होते हैं), तो क्या ऐसा होता है। वे शायद उन घटनाओं की नकल करने की

कोशिश कर रहे थे जब टैट्रा गुफाओं में पहुँची होंगी।

सतही मछलियों को गुफा जैसी परिस्थितियों में रखने से पहले शोधकर्ताओं ने पता किया कि बाहर के मीठे पानी और गुफा के पानी में क्या अन्तर है - तापमान, अम्लीयता, घुलित ऑक्सीजन आदि। सबसे बड़ा अन्तर पानी के खारेपन में पता चला - बाहर के पानी की तुलना में गुफा के पानी का खारापन काफी कम था। तो फिर प्रयोगशाला में इन वैज्ञानिकों ने गुफा जैसे पानी एवं वातावरण में बाहर की मछलियों के भ्रूण को पाला। इस नए वातावरण में पली मछलियों की आँखों के आकार में काफी विविधता दिखी। कुछ मछलियों की आँखें बहुत ही बड़ी थीं और कुछ की बहुत ही छोटी। जब छोटी मछलियों का अलग से प्रजनन किया तो देखा कि ये लक्षण - छोटी आँखें - उनकी सन्तान में भी पाए गए। तो एकदम अलग व नए वातावरण में आने के कारण आँखों में विविधता काफी अधिक दिखने लगी। यह तो हम नहीं कह सकते कि मैक्सीकन केवफिश के पूर्वजों को भी पानी के खारेपन में फर्क का सामना करना पड़ा होगा लेकिन हमें इतना तो पता है कि इन मछलियों में तनाव के कारण छिपी विविधता प्रकट हो सकती है।

इसके आगे की कहानी का हम अन्दाज़ा ही लगा सकते हैं क्योंकि इसके बाद जो गुफाओं में मछलियों की आँखों में परिवर्तन हुए होंगे, उन परिवर्तनों को होने में अनेक पीढ़ियाँ, हज़ारों-लाखों साल लगे। चूँकि आँखें ऐसे अंग हैं जिनको बनाए रखने में शरीर की काफी ऊर्जा खर्च होती है, छोटी आँखों वाली मछलियाँ आँखों के प्रति कम ऊर्जा खर्च करती होंगी और उस ऊर्जा का इस्तेमाल कहीं और कर पाती होंगी। शायद ज़्यादा तेज़ तैर पाती होंगी, जिसकी वजह से प्रजनन-साथी आसानी से मिल जाते होंगे, या शायद ज़्यादा शुक्राणु पैदा कर पाती होंगी इत्यादी। अगर ऐसे किसी कारण से ये छोटी आँखों वाली मछलियाँ अगली पीढ़ी में ज़्यादा सन्तान पैदा करतीं, तो अगली पीढ़ी में ज़्यादा छोटी आँखों वाली मछलियाँ अधिक अनुपात में होतीं। और इनमें से अगर सबसे छोटी आँखों वाली मछलियों का इसी कारण अगली पीढ़ी में ज़्यादा योगदान होता, तो गुफा की मछली की आबादी की आँखें और छोटी होतीं। ऐसा होते-होते कई पीढ़ीयों बाद, हो सकता है कि मछली की आबादी में सिर्फ वो मछलियाँ रह गईं जिनकी आँखें कमज़ोर या बिलकुल नहीं थीं; हम कह सकते हैं कि यहाँ की मछलियाँ अन्धी हो गईं।

यह ज़रूरी नहीं है और अक्सर अनेक कारणों से यह मुमकिन भी नहीं है कि *A. mexicanus* व *N. evezardi* जैसी हर मछली पर समान शोध हो। लेकिन इन दोनों मछलियों की समानताएँ देखते हुए इस समय

हम बस इतना कह सकते हैं कि शायद कानी मछरी की छोटी आँखों के पीछे की कहानी भी मैक्सीकन केवफिश के जैसी हो सकती है।

गुफाओं में रहने वाले जन्तुओं के अन्धेपन और छोटी आँखों पर चर्चा चार्ल्स डार्विन के समय से चल रही है। डार्विन ने खुद अपनी किताब *द ओरिजिन ऑफ स्पीशीज़* में इनके बारे में लिखा है। उन्होंने अपने और अन्य लोगों के अवलोकन की ओर ध्यान खींचते हुए कहा कि अँधेरी गुफाओं में रहने वाले कई जन्तु अक्सर अन्धे या छोटी आँखों वाले होते हैं। इनमें कीट, केकड़ा, चूहा और मछली शामिल हैं। कई बार इन जानवरों से मिलते-जुलते जीव गुफाओं के बाहर मिल जाते हैं जो सिर्फ इस एक मायने में इनसे अलग हैं - आँखें। तो उनको लगा कि बाहर के जन्तुओं ने गुफाओं में बसने के बाद अपनी आँखें खोई हैं, और यह उनके उपयोग न करने के कारण ही हुआ है और प्राकृतिक चयन के कारण ही हुआ होगा। आनुवंशिकता कैसे काम करती है, एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में गुण कैसे पहुँचते हैं, इस प्रक्रिया की जानकारी के न होते, डार्विन और अन्य वैज्ञानिक इसके आगे नहीं बढ़ पाए।

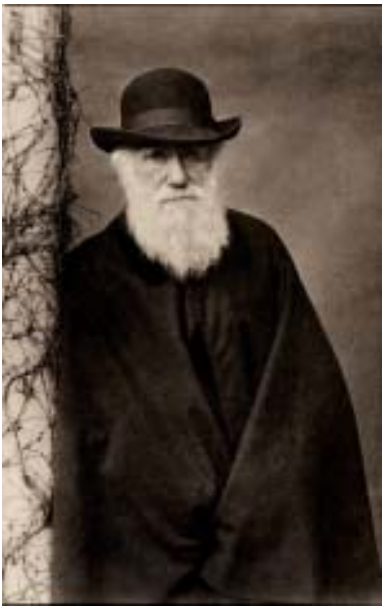

चित्र-5: चार्ल्स डार्विन

A. mexicanus पर शोध के कारण ही हमें पता चला है कि गुफाओं के जन्तुओं में अन्धेपन या छोटी आँखों का जैव-विकास कैसे हुआ होगा। कानी मछरी के अलावा भी कई रोचक जीव हैं जिनके लिए भूमिगत गुफाएँ प्राकृत-वास हैं। उनके बारे में चर्चा शायद फिर कभी करेंगे।

विनता विश्वनाथनः 'संदर्भ' पत्रिका से सम्बद्ध हैं।

धूप में टँगा धूल का एक कण

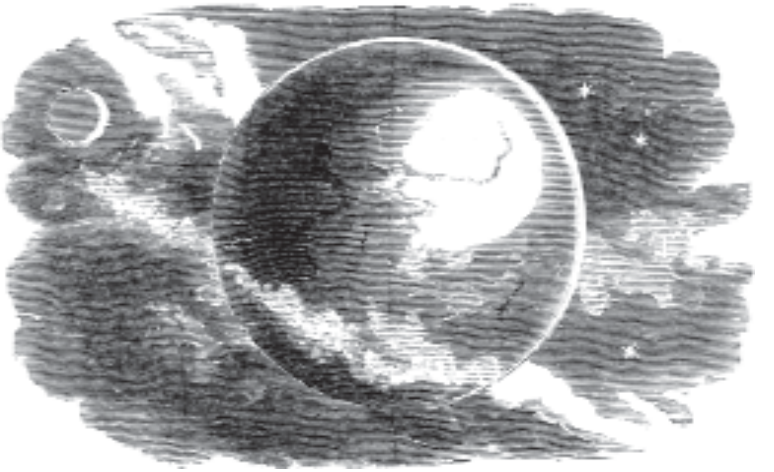

रुद्राशीष चक्रवर्ती

करीबन 5 कि.मी.।

मैं अपने घर से ऑफिस तक रोज़ाना सुबह लगभग इतनी सायकिल यात्रा करता हूँ और फिर शाम को वापिस इतनी ही घर जाने में।

तो यह प्रतिदिन करीब 10 कि.मी. की यात्रा हुई। हैरानी की कोई बात नहीं, है ना? हम में से कई लोग रोज़ाना इतनी यात्रा करने के आदी हैं - स्कूल, कॉलेज या ऑफिस तक।

यानी यह एक सरल राशि है।

अब इस संख्या को देखिए: 19,54,00,00,000। यदि इसे मानक शब्दों में व्यक्त करेंगे तो कहेंगे 19.54 अरब।

और क्यों न इस निरर्थक संख्या के पीछे एक मात्रक लिख दें? मैं उस मात्रक का उपयोग पहले ही कर चुका

हूँ - किलोमीटर।

अरे, यह संख्या तो और भी विचित्र, डरावनी दिखने लगी - 19.54 अरब कि.मी.।

हूँऽऽऽ, थोड़ा बेहतर एहसास पाने के लिए यह देखते हैं कि सूरज पृथ्वी से कितना दूर है।

यह दूरी तो मात्र 0.15 अरब कि.मी. है। इससे तो कोई मदद नहीं मिली।

चलो और देखते हैं - प्लूटो सूरज से कितना दूर है? हम सब प्लूटो का नाम तो जानते ही हैं, नहीं? एक समय था जब हम स्कूल की पाठ्य-पुस्तकों में पढ़ा करते थे कि प्लूटो हमारे सौर मण्डल का नौवाँ ग्रह है। नौवाँ इसलिए क्योंकि यह सबसे दूर है। मगर 2006 में वैज्ञानिकों ने बेचारे प्लूटो को बेरहमी से ग्रहों के अभिजात्य समूह से निष्कासित करने का फैसला किया और इसे मात्र एक बौना ग्रह घोषित कर दिया जबकि प्लूटो की कोई गलती नहीं थी। बहरहाल, यह हमारे सूरज से बहुत दूर है। तथ्यों की बात करें तो, प्लूटो जब सूरज से दूर-से-दूर होता है तो 7.4 अरब कि.मी. दूर होता है।

मगर 7.4 अरब कि.मी. तो 19.54 अरब कि.मी. का आधा भी नहीं है। यानी इस राशि का एहसास इतना आसान नहीं है।

सवाल यह है कि इस दूरी का अर्थ क्या है? क्या यह कोई वास्तविक दूरी है? कहाँ से, कहाँ तक? और हम इसके बारे में बात क्यों कर रहे हैं?

जवाब उजागर करने से पहले मैं आपको दो और आँकड़े दूँगा, तुलना के लिए।

लगभग 20 मिनट। इतना समय लगता है मुझे घर से ऑफिस पहुँचने में। आने-जाने का हिसाब लगाएँ तो यह लगभग 40 मिनट की दैनिक यात्रा होगी। यह भी हम सबको समझ में आता है कि घर से ऑफिस या कहीं और की यात्रा में इतना समय लगता है।

हूँऽऽऽ, 37 साल 2 महीने के बारे में क्या खयाल है? यह किसी यात्रा की अवधि है जिसके दौरान आप एक सेकण्ड के लिए भी न रुकें और यह भी पता न हो कि अन्ततः कहाँ पहुँचने वाले हैं। मगर इस यात्रा के बारे में दो बातें पता हैं - पहली तो यह कि यह यात्रा निकट भविष्य में समाप्त नहीं होने वाली है और दूसरी कि घर वापसी कभी नहीं होगी।

अब वक्त आ गया है कि मैं आपका परिचय अन्तरिक्ष खोजी यान वोयेजर-1 से कराऊँ।

मुझे यकीन है कि आपने इतना अन्दाज़ तो लगा ही लिया होगा कि शायद कोई भी जीवित चीज़ 37 साल तक बगैर रुके नहीं चल सकती; अर्थात् कहीं-न-कहीं कोई मशीन इस किस्से में शामिल होगी।

वोयेजर-1 का प्रक्षेपण नासा ने संयुक्त राज्य अमेरिका से 5 सितम्बर

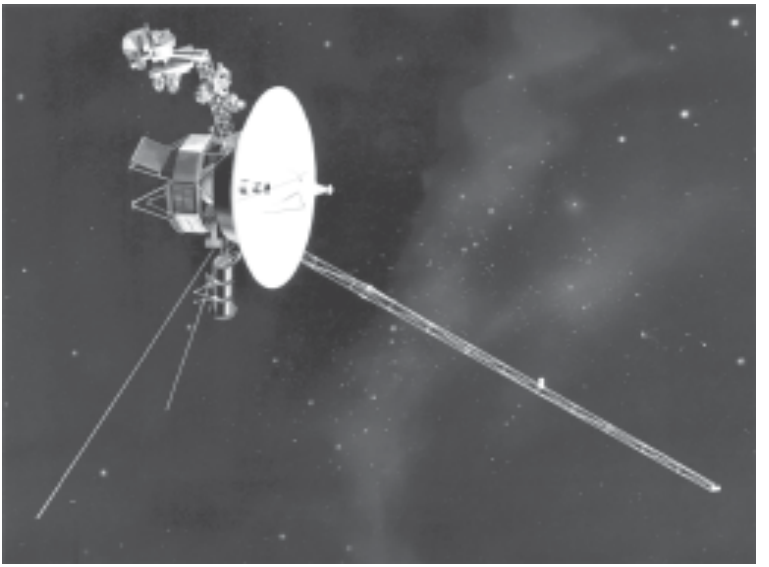

वोयेजर-1 एक प्रोटोटाइप।

1977 को किया था। इसका प्रमुख मकसद बृहस्पति और शनि के उपग्रह तंत्र का अध्ययन करना था। ये दोनों प्रमुख अभियान तो नवम्बर 1980 में पूरे हो गए थे। तब इसके संचालकों ने इसे एक नए काम पर लगा दिया - कि पहले यह हमारे सौर मण्डल के बाहरी हिस्सों का अध्ययन करेगा और उसके बाद तारों के बीच फैले अन्तरिक्ष यानी अन्तर-तारकीय अन्तरिक्ष की खोजबीन करने को निकल जाएगा।

आज 14 मई, 2015 के दिन जब मैं ये पंक्तियाँ लिख रहा हूँ तब यह खोजी यान अपनी यायावरी के 37 साल 8 महीने और 9 दिन पूरे कर चुका है। शुरू में 19.54 अरब कि.मी. का जो आँकड़ा दिया गया था वह 6 दिसम्बर, 2014 के दिन इसकी पृथ्वी से दूरी का आँकड़ा था, जो गणनाओं के आधार पर निकाला गया था। उस समय इस यात्रा में 37 वर्ष और 2 माह की अवधि बीत चुकी थी। तब से करीब चार महीने बीत चुके हैं और वोयेजर-1 लगभग 61,000 कि.मी. प्रति घण्टे की रफ्तार से चलता जा रहा है। और शायद जब तक इसका वजूद रहेगा तब तक यह इसी तरह चलता रहेगा।

नासा द्वारा सितम्बर 2013 में की गई घोषणा के मुताबिक वोयेजर-1 ने 25 अगस्त, 2012 के आसपास अन्तर-तारकीय अन्तरिक्ष में प्रवेश किया था

- यानी यह तारों के आंगन में पहुँच चुका था।

जिस समय वोयेजर-1 ने अपना सफर शुरू किया था, मेरे जन्म के दस साल पहले और आपमें से कई लोगों के जन्म से पहले; तब से यह मशीन लगातार चलती हुई हमसे जितनी दूर जा चुकी है, उतनी दूर आज तक कोई भी व्यक्ति या कोई भी चीज़ नहीं गई है।

मैं जानता हूँ कि आप यही सोच रहे होंगे, "ऐसा कैसे हो सकता है कि कोई मशीन बगैर रुके पिछले चार दशकों से चलती जा रही है और पता नहीं कितने दशकों तक चलती रहेगी? क्या इसमें नासा ने शक्ति का कोई जादुई स्रोत लगाया है जो वे किसी को बताना नहीं चाहते?"

बहरहाल, ऐसा कुछ नहीं है। इस अन्तरिक्ष यान में दो तरह के ईंधन हैं। एक है यान को आगे बढ़ाने व दिशा बदलने के लिए (प्रणोदक यानी प्रोपेलेंट) और दूसरा है बिजली को चालू रखने के लिए। इसे आगे धकेलने वाला ईंधन है आइसोहायड्रेज़ीन। यह हाइड्रोजन और नाइट्रोजन का एक सरल यौगिक है जिसकी गन्ध अमोनिया जैसी होती है। इसे चुनने का कारण यह है कि यह सस्ता है और इसका हिमांक (ठोस बनने का तापमान) बहुत कम है। वोयेजर में जेट का उपयोग यान को दिशा देने के लिए होता है। इसलिए इस ईंधन का तकनीकी नाम है 'रुझान नियंत्रण प्रणोदक' (ज़ाहिर है कि इसे लगातार धक्का देने की ज़रूरत नहीं पड़ती। इसलिए शुरू में इसे जो धक्का दिया गया था, वह काफी देर तक काम आया। इसके अलावा वोयजर-1 ने अन्य ग्रहों के गुरुत्वाकर्षण का भी फायदा उठाया। इनके प्रभाव से यान की रफ्तार बढ़ जाती है। जैसे वोयेजर-1 ने बृहस्पति के ज़ोरदार गुरुत्व क्षेत्र का फायदा उठाया और शनि की ओर बढ़ गया। बृहस्पति के प्रभाव के कारण इसकी सूर्य-सापेक्ष रफ्तार में 57,450 कि.मी. प्रति घण्टे की वृद्धि हुई थी)। नासा का अनुमान है कि इसकी ईंधन कार्यक्षमता 13,000 कि.मी. प्रति लीटर हायड्रेज़ीन है। काफी प्रभावशाली संख्या है।

वोयेजर-1 में इतना ईंधन है कि यह 2040 तक काम देगा। दरअसल इसकी वास्तविक सीमा तो दूसरा ईंधन तय करता है - प्लूटोनियम-238। प्लूटोनियम-238 ही वह ईंधन है जो इसके वैज्ञानिक उपकरणों और संचार यंत्रों को चलाए रखता है। प्लूटोनियम-238 के रेडियोधर्मी-विखण्डन से जो ऊष्मा प्राप्त होती है उसकी मदद से ताप-विद्युत जनरेटर काम करते हैं। प्लूटोनियम-238 के छर्रे इरिडियम आधारित खास मिश्र-धातु की खोल में बन्द कर दिए गए थे ताकि यदि वोयेजर-1 पृथ्वी से उड़ान भरने के बाद किसी अनहोनी का शिकार होकर गिर जाए, तो प्लूटोनियम-238 की वजह से पर्यावरण में रेडियो-सक्रियता न फैल सके।

प्लूटोनियम के रेडियोधर्मी विखण्डन का मतलब यह होता है कि समय के साथ यह धीरे-धीरे कम ऊष्मा पैदा करेगा और जब ऊष्मा कम मिलेगी तो ताप-बिजली जनित्र कम बिजली पैदा करेंगे। इस समस्या को टालने के लिए नासा कम महत्वपूर्ण उपकरणों को बन्द करता जा रहा है। एक प्रयास यह भी किया जा रहा है कि कुछ उपकरणों को बीच-बीच में बन्द किया जाए। मगर ये समाधान पर्याप्त नहीं हैं और 7 अक्टूबर, 2001 तक वोयेजर में बन रही बिजली की मात्रा 267.9 वॉट रह गई थी। यह प्रक्षेपण के समय बनने वाली बिजली (लगभग 470 वॉट) का मात्र 57 प्रतिशत है।

गनीमत है कि अन्तरिक्ष में घर्षण नहीं है जो हायड्रेज़ीन का भण्डार खत्म होने के बाद यान को आगे बढ़ने से रोक सके। अर्थात् वोयजर-1 आने वाले दशकों, सदियों या शायद सहस्राब्दियों तक आगे बढ़ता जाएगा। यह यात्रा शायद मेरी मृत्यु के बाद भी, शायद इस धरती पर आज जीवित सारे जीवों की मृत्यु के बाद भी चलती रहेगी। यह यात्रा तब भी जारी रहेगी जब वे लोग भी कूच कर चुके होंगे जिन्होंने इसे बनाया, प्रक्षेपित किया, और एक ऐसी राह पर भेजा कि 'शायद सदा के लिए चलता रहेगा - आकाशगंगा की सैर करते हुए'।

मगर इस कहानी में एक अद्भुत पेंच है। सब्र कीजिए, बताता हूँ।

देखिए, वोयेजर-1 के पास संगत के लिए दो अच्छे दोस्त हैं। यह खोजी यान दरअसल नासा के वोयेजर कार्यक्रम का हिस्सा है। इस कार्यक्रम के तहत दो एक जैसे रोबोटिक खोजी यानों - वोयेजर-1 व वोयेजर-2 – को अन्तरिक्ष में भेजना था। वास्तव में पृथ्वी को छोड़ने वाला पहला यान तो वोयेजर-2 था। इसे 20 अगस्त, 1977 को छोड़ा गया था। बृहस्पति और शनि की टोह लेने के अलावा इसे यूरेनस और नेपच्यून की भी ताक-झाँक करनी थी। आज तक यही एकमात्र अन्तरिक्ष यान है जिसने इन दो गैसीय ग्रहों की यात्रा की है। यह सही है कि बाद में वोयेजर-1 इससे आगे निकल गया मगर फिर भी वोयेजर-2 सबसे दूर स्थित मानव निर्मित वस्तुओं में से एक है। 11 दिसम्बर 2014 के दिन यह पृथ्वी से 15.95 अरब कि.मी. दूर था।

मज़ेदार बात यह है कि यदि हम सौर मण्डल को हमेशा के लिए छोड़कर जाने की बात करें, तो वोयेजर वास्तव में प्रथम नहीं है। वह सम्मान तो दो अन्य जुड़वाँ अन्तरिक्ष यानों को जाता है - पायोनीयर-10 और पायोनीयर-11। इन्हें इसी क्रम में नासा ने एक वर्ष के अन्तराल पर - मार्च 1972 और अप्रैल 1973 में - छोड़ा था। ये दो ऐसी प्रथम मानव निर्मित वस्तुएँ थीं जिन्होंने अस्सी के मध्य दशक में सौर मण्डल को अलविदा कहने योग्य पलायन वेग हासिल कर लिया था। अन्ततः फरवरी 1998 में वोयेजर-1

पायोनीयर-10 से आगे निकल गया।

अनुमान था कि सितम्बर 2012 में पायोनीयर-10 और 11 पृथ्वी से क्रमशः करीब 15.96 अरब कि.मी. और 12.86 अरब कि.मी. दूर थे। मगर ये दोनों एक-दूसरे से विपरीत दिशा में आगे बढ़ रहे थे। जी हाँ, आपको यह जानकर अचरज होगा कि पायोनीयर-10 शेष तीन यानों से विपरीत दिशा में जा रहा है। मगर सच कहें तो ये चार दिलेर यान कभी एक-दूसरे से नहीं मिलने वाले। अलबत्ता, मुझे लगता है कि पायोनीयर-10 बहुत मायूस होगा कि उसे इतनी बेदिली से बाकी तीन से अलग रखने की योजना बनाई गई है।

खैर, इसमें से कोई बात कोई बड़ा पेंच नहीं लगती। तो मैं पहले उसी पर आता हूँ, फिर आखिर में थोड़ी बात और करूँगा।

कड़वा सच यह है कि दोनों पायोनीयर के साथ हमारा सम्पर्क टूट चुका है। पायोनीयर-10 के साथ 12 सालों से और पायोनीयर-11 के साथ करीब दो दशकों से। और आप समझ ही गए होंगे कि वोयेजर के साथ भी देर-सबेर यही होने वाला है, उनकी बिजली के स्रोत के कमज़ोर पड़ने की बात हमने थोड़ी देर पहले की थी। 2025 के आसपास इन दोनों के पास बिजली समाप्त हो जाएगी और ये न तो वैज्ञानिक सूचनाएँ भेज सकेंगे और न ही यान के संचालन सम्बन्धी सूचनाएँ दे सकेंगे।

शुक्र है कि इन यानों के मूल डिज़ाइनर्स बहुत रचनात्मकता के धनी थे। खास तौर से बड़ी-बड़ी दूरियों पर संकेत भेजने के मामले में उन्होंने असाधारण सृजनात्मकता का परिचय दिया है। उन्होंने चारों यानों में अन्तर-निहारिका नोट्स रख दिए हैं जिन्हें कोई भी हासिल कर सकता है, पढ़ सकता है, सुन सकता है। शर्त बस इतनी है कि यान सही सलामत रहे।

वोयेजर व पायोनीयर के सफर की शुरुआत, उनके रास्ते व वर्तमान स्थितियाँ।

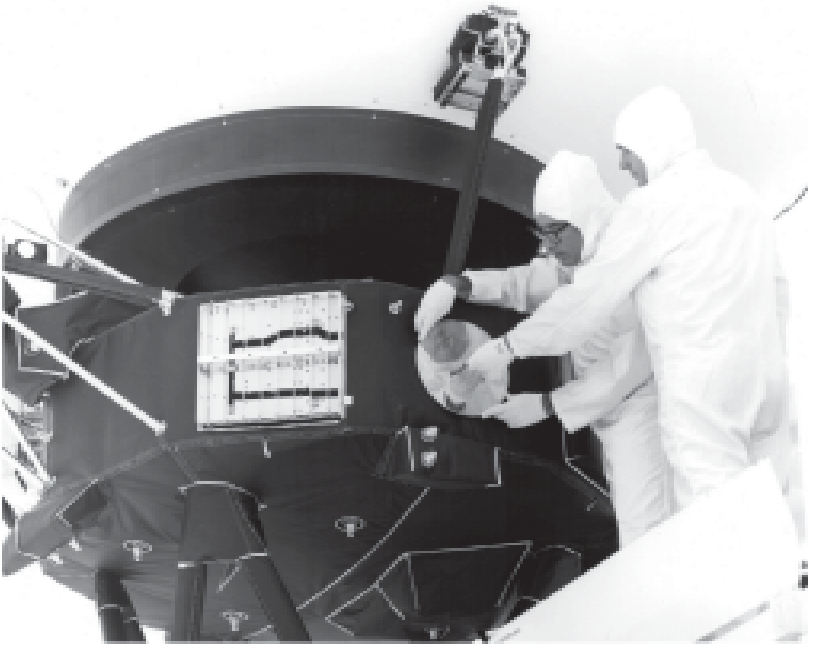

ऊपर के चित्र में वैज्ञानिक वायेजर-1 में गोल्डन रिकॉर्ड को फिट करते हुए। इस रिकॉर्ड में धरती पर मौजूद विविध प्राकृतिक ध्वनियों के अलावा गायन, संगीत एवं विविध वाद्यों की आवाज़ को भी रिकॉर्ड कर इस अन्तरिक्ष यान के साथ भेजा गया; इस उम्मीद में कि दूर कहीं कोई होगा जो इसे पढ़कर, सुनकर धरती के बारे में जान सके।

नीचे के चित्र में गोल्डन रिकॉर्ड को बड़ा करके दिखाया गया है।

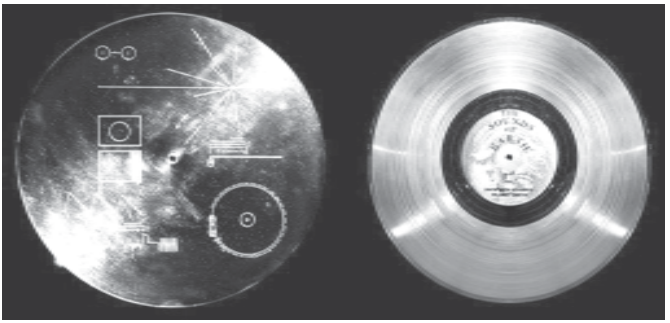

सही पढ़ा आपने 'जिन्हें कोई भी हासिल कर सकता है, पढ़ सकता है, सुन सकता है'।

यदि आप सोच रहे हैं कि यह 'कोई भी' कौन होगा तो आप इसकी जगह ज़्यादा लोकप्रिय शब्द 'एलिएन्स' इस्तेमाल कर सकते हैं।

वास्तव में इन यानों में दो किस्म के नोट्स हैं - एक को पायोनीयर फलक (Pioneer Plaques) कहते हैं और दूसरे हैं वोयेजर गोल्डन रिकॉर्ड्स। फलक पायोनीयर-10 व 11 में जड़े हैं जबकि गोल्डन रिकॉर्ड्स वोयेजर-1 व 2 में लगे हैं।

फलकों का वज़न मात्र 120 ग्राम है और ये सोने के पानी चढ़े एल्यूमिनियम से बने हैं। इस धातु की पट्टी पर चित्रात्मक संदेश उकेरा गया है। इस उत्कीर्ण चित्र में एक मानव नर व मानव मादा के नग्न चित्र हैं, और साथ में कई संकेत हैं (जैसे हाइड्रोजन के परमाणु की संरचना,

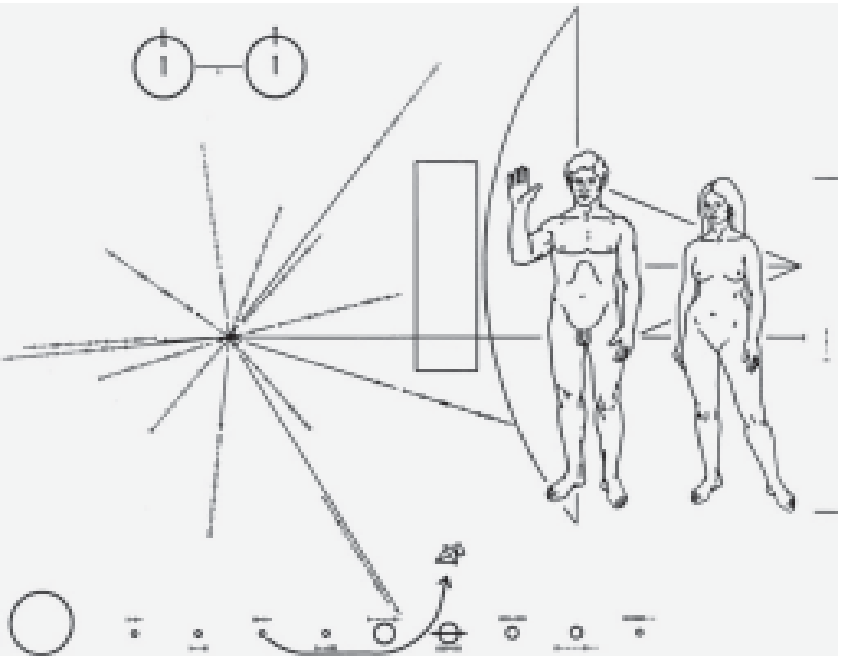

वोयेजर पर अंकित सन्देश - सौर मण्डल, यान का रास्ता, पृथ्वी ग्रह की स्थिति, इन्सानों की मौजूदगी, हाइड्रोजन परमाणु का संकेत आदि को उकेरा गया है।

न्यू साइंटिस्ट पत्रिका से साभार।

सुदूर अन्तरिक्ष में वोयेजर का स्वागत।

हमारे सौर मण्डल की संरचना वगैरह) जिन्हें इस तरह डिज़ाइन किया गया है कि वे अन्तरिक्ष यान के उद्‌गम की जानकारी दे सकें।

दूसरी ओर, वोयेजर में संलग्न फोनोग्राफ रिकॉर्ड्स में 116 छवियाँ हैं जो हमारी पृथ्वी और हमारे बारे में जानकारी देती हैं। इन रिकॉर्ड्स में कई तरह की प्राकृतिक ध्वनियाँ हैं (जैसे समुद्र की लहरों की आवाज़ें, पवन और तूफान की ध्वनि, जन्तुओं की आवाज़ें, पक्षियों और व्हेल्स के गीत वगैरह)। इसके अलावा रिकॉर्ड में विभिन्न संस्कृतियों और ज़मानों के संगीत तथा उनसठ भाषाओं में अभिवादनों को शामिल किया गया है। इनमें बंगाली, गुजराती, हिन्दी, कन्नड़, मराठी, उड़िया, पंजाबी, राजस्थानी, तेलुगु और उर्दू जैसी भारतीय भाषाएँ भी शामिल की गई हैं। इस सर्व-समावेशी 90 मिनट के संगीत संग्रह में भैरवी राग में केसरबाई केरकर का आधे मिनट का गीत 'जात कहाँ हो' शामिल किया गया है।

तो क्या अब आपको कहानी का पेंच पकड़ में आने लगा है? मैं थोड़ी मदद करता हूँ। वोयेजर के गोल्डन रिकॉर्ड में तत्कालीन यूएस राष्ट्रपति जिमी कार्टर का मुद्रित सन्देश है: "यह एक छोटे-से दूरस्थ विश्व से एक तोहफा है। यह हमारी आवाज़ों, हमारे विज्ञान, हमारी छवियों, हमारे संगीत, हमारे विचारों और हमारे जज़्बातों की एक बानगी है। हम अपने समय में जीने की जद्‌दोजहद कर रहे हैं ताकि आपके समय में जी पाएँ।"

***

तो यह है पेंच। यदि इन चार यानों के साथ हमारा सम्पर्क पूरी तरह टूट जाता है, और हमें उनका कोई अता-पता नहीं रह जाता, यहाँ तक कि जब हम भूल जाएँगे कि हमने सुदूर अन्तरिक्ष में ऐसे कोई यान छोड़े थे, या चाहे भविष्य में पूरी मानव

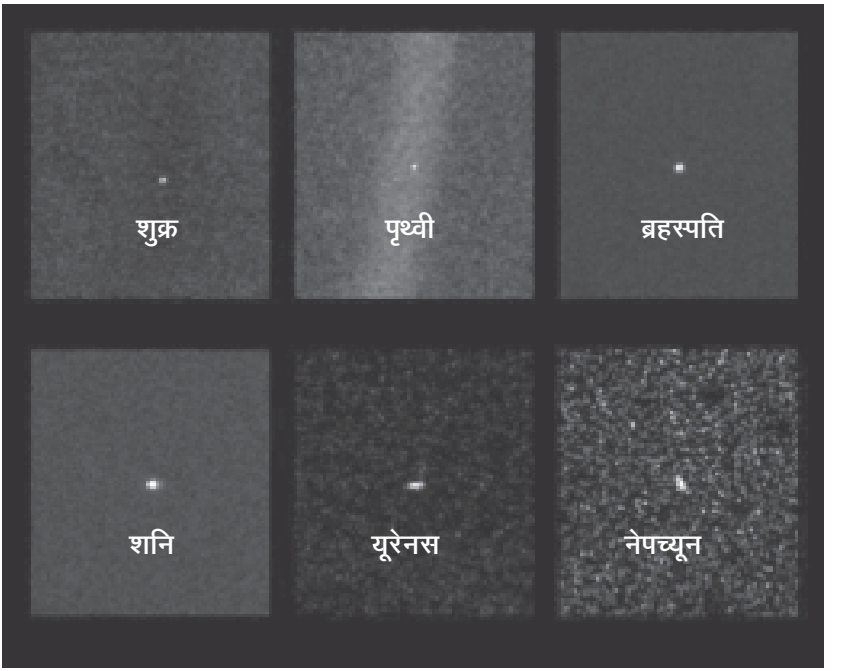

वोयेजर ने सौर मण्डल से बाहर निकलते हुए 1990 में पृथ्वी की अन्तिम बार फोटो खींची। लगभग 6 अरब कि.मी. की दूरी से खींची इस फोटो में धरती एक धूल के कण जैसी दिखाई दे रही थी। यहाँ धरती के अलावा शुक्र, बृहस्पति, शनि, यूरेनस व नेपच्यून के भी फोटोग्राफ हैं। सूरज के काफी करीब होने की वजह से बुध की फोटो नहीं खींची जा सकी और मंगल और प्लूटो की तस्वीर वोयेजर के कैमरे नहीं खींच पाए।

जाति इस धरती से सदा के लिए समाप्त हो जाए, फिर भी ये दो फलक और ये दो रिकॉर्ड ब्रह्माण्ड के विस्तार में आगे बढ़ते रहेंगे, और जब भी कोई बुद्धिमान शख्सियत इन्हें पा लेगी तो ये उन्हें बताएँगे कि हम कभी यहाँ थे।

इन दो अद्भुत चीज़ों के निर्माण का विचार अमरीका के लोकप्रिय खगोल शास्त्री, विज्ञान लेखक और विज्ञान सम्प्रेषक कार्ल सैगन ने दिया था। उन्होंने कहा था:

"यदि अन्तर-तारकीय अन्तरिक्ष में कोई ऐसी सभ्यता है जो अन्तरिक्ष यात्राएँ करती है, तभी यह अन्तरिक्ष यान उन्हें मिलेगा और वे रिकॉर्ड बजाएँगे। मगर इस 'बोतल' का ब्रह्माण्ड के 'सागर' में प्रक्षेपण इस ग्रह पर जीवन के बारे में बहुत आशाजनक सन्देश देता है।"

और अन्त में वोयेजर-1 अभियान

के बारे में कार्ल सैगन द्वारा लिखे गए आलेखों से प्रेरणा लेकर मैं कुछ निवाले छोड़ूँगा जो शायद आपके विचारों के लिए भोजन साबित होंगे।

***

वोयेजर-1 ने फरवरी, 1990 में सौर मण्डल को अलविदा कहा था और सुदूर अन्तरिक्ष की अपनी यात्रा शुरु की थी। उस समय कार्ल सैगन के अनुरोध पर नासा ने आखरी बार वोयेजर के कैमरों को पीछे की तरफ मोड़कर पृथ्वी का एक अन्तिम चित्र खींचा था। तो 14 फरवरी, 1990 को वोयेजर ने रिकॉर्ड 6 अरब कि.मी. की दूरी से पृथ्वी ग्रह का चित्र खींचा था। यह चित्र आगे चलकर 'हल्के नीले बिन्दु' के नाम से मशहूर हुआ। चित्र में पृथ्वी की साइज़ 1 पिक्सेल से अधिक नहीं है। हमारा ग्रह अन्तरिक्ष के विस्तीर्ण पटल पर कैमरे की प्रकाशीय व्यवस्था से उपजे धूप के पट्टों में एक नन्हे-से बिन्दु के रूप में दिख रहा है। यदि कोई आपका ध्यान न दिलाए तो शायद आपको नज़र भी नहीं आएगा कि यह हमारा घर है। मेरा खयाल है कि बिल्लोरी काँच के साथ एक घण्टा बिताएँगे तो शायद आपको इस तस्वीर में धरती दिख जाए।

इसके बाद 1994 में कार्ल सैगन की पुस्तक 'पेल ब्लू डॉटः ए विज़न ऑफ दी ह्यूमन फ्यूचर इन स्पेस' का प्रकाशन हुआ। इसमें उन्होंने उस लगभग किसी भी आकार से रहित तस्वीर के बारे में अपने विचार प्रस्तुत किए थे। यहाँ उसके कुछ हिस्से उद्धरित करने का मोह मैं छोड़ नहीं पा रहा हूँ।

"एक बार फिर उस बिन्दु पर विचार कीजिए। यही है। यह घर है। यह हम हैं। आप जिन सबको प्यार करते हैं, जिन सबको जानते हैं, जिनके बारे में कभी सुना है, सारे मनुष्य जो कभी अस्तित्व में रहे, अपना जीवन व्यतीत किया, वे सब यहीं (बिन्दु पर) हैं। हमारे सारे सुख-दुख, आत्मविश्वास से भरपूर हज़ारों धर्म, विचारधाराएँ और आर्थिक विचार, हमारी प्रजाति के इतिहास का हर शिकारी और संग्रहकर्ता, हर नायक और कायर, सभ्यता का हर निर्माता और विनाश-कर्ता, हर राजा और रियाया, प्रेम करने वाला हर युगल, सारे माँ और पिता, आशान्वित बच्चा, आविष्कारक और खोजी, नैतिकता का हर शिक्षक, हर भ्रष्ट राजनेता, हर सुपरस्टार, हर महानायक, हर सन्त और पापी यहीं रहा है - धूप में टंगे धूल के एक कण पर।"

***

इस साल जनवरी में मैंने मिथकीय कथा साहित्य के एक युवा भारतीय लेखक को कहते सुना था कि उनकी पीढ़ी तो भारत में विज्ञान और टेक्नोलॉजी के लोकप्रियकरण के ज़माने में पली-बढ़ी है। तो हमें स्कूलों और कॉलेजों में स्वतंत्र कल्पनाशीलता से मरहूम रखा गया। इसलिए कई सारे वर्तमान लेखक, जो उस समूह के

सदस्य रहे हैं, अपनी कहानियों और उपन्यासों के लिए प्रेरणा हेतु सीधे-सीधे अपनी मायथोलॉजी की ओर रुख कर रहे हैं। मैं भी विज्ञान का विद्यार्थी रहा हूँ और उक्त लेखक की पीढ़ी का ही हूँ। इतने बुद्धिमान व प्रतिभाशाली व्यक्ति द्वारा युवाओं में कल्पनाशील विचारों की तबाही के लिए विज्ञान व टेक्नोलॉजी शिक्षा को दोष देने की बात सुनकर पहले तो मेरे मन में अविश्वास जागा, फिर गुस्सा आया और अन्ततः मायूसी छा गई। भारतीय शिक्षा प्रणाली के प्राचीन घराने के एक उत्पाद के तौर पर मैं जानता हूँ कि हमारे स्कूलों और कॉलेजों में विज्ञान के विषय कितने उबाऊ ढंग से पढ़ाए जाते हैं। मगर यह निहायत बेतुकी बात है कि शिक्षा संस्थानों में विज्ञान की घटिया पढ़ाई के आधार पर यह अन्तिम सत्य की तरह घोषित कर दिया जाए कि विज्ञान कल्पना-शीलता के लिए एक अभिशाप है।

आपको इस अन्तिम वक्तव्य का प्रमाण चाहिए? इंटरनेट की मदद से *पेल ब्लू डॉट* को खोजिए। इसके बाद कार्ल सैगन की उन पंक्तियों को पढ़िए। और यदि रात का समय हो, तो छत पर जाकर कुछ समय आसमान को निहारिए। और आसमान को निहारते हुए कल्पना कीजिए कि जब आप अपने रोज़मर्रा के काम हफ्ते-दर-हफ्ते, महीने-दर-महीने करते जाते हैं, तब चार अन्तरिक्ष यान वहाँ आसमान में मौजूद हैं जो हर सेकण्ड अपने उद्गम से दूर, सुदूर अन्तरिक्ष के विस्तार में आगे बढ़ते जा रहे हैं। वे इतने तनहा हैं कि उनके बारे में सोचकर भी रोंगटे खड़े हो जाते हैं। ये कभी वापिस नहीं आएँगे, उन्हें पता नहीं है कि उनकी मंज़िल कहाँ है। फिर भी वे हमारी सभ्यता का पैगाम हर वक्त अपने साथ लेकर चल रहे हैं।

रुद्राशीष चक्रवर्ती: एकलव्य, भोपाल के प्रकाशन समूह के साथ कार्यरत हैं।

अँग्रेज़ी से अनुवादः सुशील जोशी: एकलव्य द्वारा संचालित स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। विज्ञान शिक्षण व लेखन में गहरी रुचि।

रोशनी के दर्रे

ऐड्रियन फोर्सिथ और कैन मियाटा

कटिबन्धीय जंगलों की फितरत है कि वे उसका वर्णन करने वालों में लफ्ज़ों का सैलाब पैदा कर देते हैं।

- पॉल रिचर्ड्स
द ट्रॉपिकल रेनफॉरेस्ट

1952 में जब रिचर्ड्स ने यह बात कही थी, उस समय तक यह शिकवा पुराना हो चुका था। इसके करीब एक सदी पहले महान विक्टोरियाई प्रकृतिविद् ऐल्फ्रेड रसल वॉलस अपने पाठकों को आगाह कर चुके थे कि "कटिबन्धीय प्रकृति की प्रचुरता और सौन्दर्य एक घिसा-पिटा विषय है और इसके बारे में नया कहने को बहुत कम है।" फिर भी कटिबन्धीय बरसाती जंगल का वर्णन करने की कठिनाइयों के चलते यह बासी पड़ चुके विवरणों और बने-बनाए मुहावरों का अखाड़ा बना हुआ है। इनमें से सबसे आम मुहावरा है कि कटिबन्धीय जंगल गिरजाघरनुमा होते हैं। इस मुहावरे को जन्म देने के

चित्र-1: उँचे और विशाल गोथिक गिरजाघर।

चित्र-2: कटिबन्धीय बरसाती जंगलों के बड़े-बड़े पेड़।

लिए सम्भवतः वॉलस ही ज़िम्मेदार थे, हालाँकि वे शायद इसके उपयोग को स्वीकार न करते। वॉलस ही थे जिन्होंने पुश्ता जड़ों (buttresses) वाले बड़े-बड़े पेड़ों को गोथिक संरचनाएँ कहा था। मार्सटन बेट्स ने अपनी मशहूर पुस्तक *द फॉरेस्ट एंड द सी* में इस उपमा को खूब विस्तार दिया था और तब से यह उपमा एक पिटा-पिटाया रूपक बन गई है।

बहरहाल, यह उपमा पर्याप्त उदार नहीं है। गिरजाघर रौबीले और खूबसूरत स्थान होते हैं, मगर किसी बरसाती जंगल की तुलना में वे काफी सरल होते हैं। गोथिक गिरजाघरों में पुश्तों की रचना और कार्य को भलीभाँति समझ लिया गया है मगर बरसाती जंगल के पेड़ों के पुश्तों की रचना व सम्भावित कार्य की समझ आधी-अधूरी ही है। वॉलस ने इन रचनाओं की ओर ध्यान दिलाया था और उसके कई वर्षों बाद, आज भी ये पुश्ते वैज्ञानिक बहस का विषय बने हुए हैं।

कटिबन्धीय बरसाती जंगल में पुश्ते कई आकार-प्रकार धारण करते हैं मगर ये बरसाती जंगल के कई बड़े पेड़ों के आम लक्षण हैं। बरसाती जंगल के इन लम्बे-लम्बे पेड़ों के तने प्रायः सीधे खम्भे होते हैं जिन पर कोई शाखाएँ नहीं होतीं जब तक कि तना जंगल के ऊपरी छोर पर न पहुँच जाए। मगर ज़मीन से करीब 20 फुट की ऊँचाई

पर इन तनों में से पतली-पतली दूर-दूर तक फैली पुश्ता जड़ें निकलकर ज़मीन में घुस जाती हैं। इन पतली-पतली पुश्ता जड़ों को एक लाइन से जोड़ेंगे तो उसका घेरा पचास फुट तक हो सकता है, हालाँकि तने के जिस स्थान से ये जड़ें निकलती हैं वहाँ तने का व्यास अधिक-से-अधिक पाँच-छः फुट होगा।

पुश्तों का कार्य

पुश्तों का सबसे ज़ाहिर कार्य तो यांत्रिक स्थिरता प्रदान करना है: ये पेड़ को गीली और उथली मिट्टी में टिकने में मदद करती हैं। ऐसी गीली व उथली मिट्टी कई बरसाती जंगलों की पहचान है। मगर इनकी मौजूदगी की वैकल्पिक व्याख्याएँ भी दी गई हैं। जैसे पुश्ता जड़ें पानी के संवहन में मददगार होती हैं, ऑक्सीजन के लेन-देन के लिए बड़ी सतह उपलब्ध कराती हैं, पत्तियों के कचरे से पोषक पदार्थों को प्राप्त करने में सहायता करती हैं और अनचाही लयाना-लताओं को ऊपर चढ़ने से रोकती हैं।

इन सब विचारों में थोड़ी-बहुत वैधता तो ज़रूर है मगर जिस किसी ने भी ऐसी जड़ों वाले पेड़ के टूँठ को उखाड़ने की कोशिश की होगी, वह शायद सहमत होगा कि स्थिरता वाला तर्क सबसे सही है। इस मत के विरोधी कहते हैं कि बरसाती जंगल के बड़े-बड़े पेड़ों के लिए स्थिरता कोई बड़ा मुद्दा नहीं है। ये बड़े-बड़े पेड़ घने जंगलों से घिरे होते हैं और इनकी कैनपी इतनी पास-पास सटी होती हैं कि हवा के झोंके इन्हें डिगा नहीं सकते। एक तथ्य यह भी है कि दक्षिण अमेरिका के कटिबन्धीय जंगलों के कई इलाकों में तो तूफान आते ही नहीं। तो, तेज़ हवाएँ कोई कारक ही नहीं हैं। अलबत्ता, यह मत सरसरी तौर पर किए गए अवलोकनों पर टिका है और हमें कमज़ोर लगता है।

यह मानना गलतफहमी है कि जंगल के पेड़ों की वृद्धि के पैटर्न को तय करने में हवाएँ गौण कारक हैं। हम कटिबन्धीय हवाओं के बारे में जो भी मान्यताएँ बनाते हैं वे एक संकीर्ण परिप्रेक्ष्य पर टिकी होती हैं। प्रकृतिविद् कटिबन्धीय जंगल में प्रायः ज़मीन पर ही रहते हैं। यह जंगल का वह हिस्सा है जो तेज़ हवाओं से काफी सुरक्षित रहता है। जंगल के अन्दर शान्त वातावरण प्रायः इस बात को छिपा लेता है कि 100 फीट ऊपर कैनपी के स्तर पर हवाएँ चलती रहती हैं। ज़ोरदार हवाओं के दौरान भी जंगल का फर्श शान्त बना रहता है। बरसाती तूफानों के साथ चलने वाली हवाओं का एकमात्र संकेत हमें गिरते हुए फलों और शाखाओं की आवाज़ से मिलता है। पेड़ों का जीवन काल अक्सर किसी मानव प्रेक्षक से कहीं ज़्यादा होता है। यदि दो ज़ोरदार हवाओं के बीच 10-20 साल का अन्तराल हो, तो सम्भवतः हम इन्हें महत्वहीन घटनाएँ कहकर खारिज कर देंगे। मगर

यदि 200 साल जीने वाले किसी पेड़ की नज़र से देखें तो 10-20 या पचास साल के अन्तराल पर बहने वाली शक्तिशाली हवाएँ भी महत्वपूर्ण घटनाएँ होंगी।

दक्षिण पेरू में माद्रे द दिओस के बरसाती जंगल में शायद धरती के किसी भी क्षेत्र से ज़्यादा समृद्ध प्राणी जगत पाया जाता है। मैंने उम्मीद की थी कि यह एक शानदार ऊँचा जंगल होगा और इसकी निचली मंज़िल साफ-सुथरी और अन्धकारमय होगी जैसा कि मैंने कटिबन्धीय अमेरिका के अन्य अनछुए बरसाती जंगलों में देखा था। मगर रियो ताम्बोपेटा के जंगल की ऊँचाई कम थी और झाड़-झंखाड़ ही ज़्यादा थे। यह मुझे आदिम बरसाती जंगल की बजाय द्वितीयक वृद्धि वाला जंगल लगा। जब मैंने इसमें घुसकर चहलकदमी की तो इसकी निचली मंज़िल काफी घनी थी जिसकी वजह से मुझे पगडण्डियों से चिपके रहना पड़ा। मैं काफी निराश हुई और सोचने लगी कि यहाँ इतना कचरा क्यों है।

जवाब जल्दी ही मिल गया। रात को दक्षिण से तेज़ आवाज़ करती हुई हवाएँ उठीं। पेटागोनिया के मैदान को जाड़ों ने जकड़ लिया और हम तक पहुँचने वाली हवाएँ नीची भूमि वाले कटिबन्ध के हिसाब से सर्द थीं। अगले दिन का तापमान 15 डिग्री सेल्सियस से ऊपर नहीं गया और हवाओं ने पूरे जंगल में पेड़ों और शाखाओं को तोड़ा-गिराया। ये हवाएँ बगैर रुके दो दिन तक चलती रहीं और इन्होंने मुझे कटिबन्धीय इलाके में 'असामान्य मौसम' का एक नया अहसास दिया। रियो ताम्बोपेटा के किनारे पर ऊँचे-ऊँचे पेड़ या तो संकरे दर्रों में थे या दक्षिण की ओर पहाड़ियों की बदौलत हवाओं से सुरक्षित स्थानों पर थे। शक्तिशाली हवाएँ इस इलाके में बहुत बार नहीं आतीं मगर उन्होंने जंगल की बनावट और डील-डौल पर अपनी छाप छोड़ी है।

चित्र-3: माद्रे द दिओस के बरसाती जंगल।

पेड़ों का गिरना

यह सही है कि नीची भूमि वाले कटिबन्धों में आम तौर पर तेज़ हवाएँ नहीं चलतीं मगर बरसाती जंगलों में पेड़ गिरना आम बात है। तेज़ हवाएँ

न सही, शायद पेड़ों की छतरी (कैनपी) की बेडौल असन्तुलित रचना और उनसे लिपटी लताओं और उन पर उगे ऊपरीरोही (वायवीय, epiphytic) पौधों से पैदा हुआ तनाव इसके लिए ज़िम्मेदार हो सकता है। कारण जो भी हो, कटिबन्धीय बरसाती जंगल में पेड़ों के गिरने की दर आश्चर्यजनक रूप से तेज़ होती है। इनके गिरने से अनुक्रमण (नए जीवों के क्रमिक पदार्पण) के लिए नई-नई जगहें खाली होती रहती हैं। परिणाम यह होता है कि एक चितकबरा जंगल अस्तित्व में आता है - प्रौढ़ पेड़ जो जंगल की पूरी ऊँचाई (कैनपी) तक पहुँचते हैं, निचली मंज़िल में कम ऊँचाई की झाड़ियाँ, और नए-नए उगे पौधे तथा मध्यम आकार के पेड़ जो कैनपी की ओर बढ़ रहे हैं। विशालकाय पेड़ों के साथ छोटे आकार के पेड़ मिलते हैं। इस तरह से जंगल का दृश्य कहीं अधिक विविधता-पूर्ण होता है, यह वैसा समांगी तो बिलकुल नहीं होता जैसा हमें बताया जाता है। कटिबन्धों में पहली बार जाने वाले लोग अपने साथ कुछ पूर्व-धारणाएँ लेकर जाते हैं। उन्होंने पढ़ा होता है कि बरसाती जंगल में पेड़ कई अलग-अलग स्पष्ट परतों में जमे होते हैं मगर वे यह नहीं समझ पाते कि इन परतों की प्रकृति अत्यन्त गतिशील होती है। बरसाती जंगल में कुछ ही चीज़ें स्वतः नज़र आती हैं। यह हो सकता है कि कुछ जंगलों में अलग-अलग कैनपी परतें एकदम स्पष्ट होती हैं मगर हमारे लिए ऐसी परतें पहचानना हमेशा कठिन रहा है, बताया जाए तब भी शायद हम उन्हें नहीं पहचान पाते।

गैरी हार्टशॉर्न एक अग्रणी नव-कटिबन्धीय वनिक हैं। उन्होंने कई नव-कटिबन्धीय जंगलों में पेड़ गिरने की दरें नापीं और पाया कि ये दरें इतनी ज़्यादा हैं कि उनकी नवीनीकरण अवधि (यानी जितने समय में कोई जंगल पूरी तरह नया हो जाएगा) 80-135 वर्ष के दायरे में है। इसका मतलब है कि शीतोष्ण जंगलों के मुकाबले कटिबन्धीय बरसाती जंगल कहीं अधिक गतिशील (परिवर्तनशील) होता है।

इससे यह भी संकेत मिलता है कि कटिबन्धीय जंगल की सैकड़ों वृक्ष प्रजातियाँ कैसे सह-अस्तित्व बनाए रखती हैं। जन्तु प्रजातियों के बीच प्रतिस्पर्धा के अध्ययनों से पता चलता है कि वे संसाधनों का बँटवारा कुछ इस तरह करती हैं कि प्रत्येक प्रजाति संसाधन पुंज के किसी एक विशिष्ट हिस्से पर जीवित रहती है। यह कल्पना करना अपेक्षाकृत आसान है कि शीतोष्ण जंगलों में पाई जाने वाली चन्द दर्ज़न वृक्ष प्रजातियाँ मिट्टी के प्रकार, अम्लीयता, प्रकाश और खुली हवा का बँटवारा करके साथ-साथ जी सकती हैं। मगर इन्हीं बुनियादी संसाधनों को कटिबन्धीय बरसाती जंगल की 400 से ज़्यादा प्रजातियों में बाँटना मुश्किल ही नहीं नामुमकिन लगता है।

खाली स्थानों में पनपते जीव

जब कोई पेड़ जंगल की कैनपी को चीरते हुए गिरता है, तो वह रोशनी के एक सुराख और निचली मंज़िल के अन्धकार में बदलाव का रास्ता खोल देता है। प्रकाश ऊर्जा है और ऊर्जा बदलाव लाती है। धूप का नया कतरा तत्काल जंगल के फर्श पर जीवन में बड़े बदलाव का सबब बनता है। आम तौर पर वहाँ खरपतवारनुमा झाड़ियाँ और उलझी हुई लताएँ पसर जाती हैं। मगर किसी पेड़ की जानलेवा डुबकी के साथ शुरू होने वाले बदलाव में झाड़ियों और लताओं की जो भीड़भाड़ पैदा होती है, उसमें इकॉलॉजीविद् कुछ पैटर्न पहचानने लगे हैं।

पेड़ के गिरने से पैदा हुआ खाली स्थान कटिबन्धीय जंगल में एक महत्वपूर्ण व पेचीदा संसाधन है। कई पेड़ तो स्थापित होने और अपने विकास के लिए पूरी तरह इन खाली स्थानों पर निर्भर होते हैं। हार्टशोर्न ने पाया कि कोस्टा रिका के एक बरसाती जंगल में 75 प्रतिशत पेड़ इन खाली स्थानों के भरोसे हैं। इन खाली जगहों की साइज़ में बहुत विविधता होती है और इस वजह से अन्दर पहुँचने वाली धूप की मात्रा में भी काफी अन्तर होते हैं। इन अन्तरों के चलते सूक्ष्म-जलवायुगत बदलाव होते हैं। कुछ पेड़ बड़े रिक्त स्थान के विशेषज्ञ होते हैं - अर्थात् उन्हें अपने अंकुरण और वृद्धि के लिए तेज़ धूप और उच्च

चित्र-4: पेड़ के गिरने से जंगल में खाली स्थान।

तापमान की दरकार होती है जो बड़े खाली स्थान से प्राप्त होते हैं। इन पेड़ों की पौध छाया को सहन नहीं कर सकती। ये विशाल-सुराख (झरोखा) विशेषज्ञ इस तेज़ धूप का इस्तेमाल निचली मंज़िल की प्रजातियों की अपेक्षा बेहतर ढंग से कर सकते हैं। जंगल की निचली मंज़िल के पौधे इतनी तेज़ धूप के आदी नहीं होते और वे उस मद्धिम-सी धूप का कार्यक्षम उपयोग करने के लिए अनुकूलित हो चुके हैं जो उनके हिस्से आती है। जब ज़्यादा धूप उपलब्ध होती है तो वे इसका फायदा उठाकर तेज़ी से वृद्धि करने में असमर्थ रहते हैं।

बड़े खाली स्थान को घेरने वाले पौधे आम तौर पर तेज़ी से बढ़ते हैं और अपनी बड़ी-बड़ी पत्तियों के माध्यम से एक छतरीनुमा मुकुट धारण कर लेते हैं जो अधिक-से-अधिक धूप का उपयोग कर पाती हैं। ऐसा लगता है कि ये महारथी प्रतिस्पर्धा में अन्य छाया-सहिष्णु अंकुरों से तभी बाज़ी मार पाते हैं जब खाली स्थान 825 वर्ग मीटर या उससे बड़ा हो। इस आकार के खाली स्थान अपेक्षाकृत बिरले होते हैं और इनको खोजकर उपयोग करने के लिए बीजों के बिखराव की समस्याएँ सामने आती हैं।

अधिकांश ऐसे पेड़ों के बीजों का बिखराव पक्षियों और चमगादड़ों द्वारा किया जाता है। बड़े खाली स्थानों पर महारत रखने वाले अधिकांश पेड़ों में खूब सारे फल पैदा होते हैं और ये फल बारीक-बारीक बीजों से भरे होते हैं। और इन पर लगभग पूरे मौसम में फल आते रहते हैं। बिखराव की इस रणनीति से इस बात की सम्भावना बढ़ जाती है कि जब कैनपी में कोई खाली स्थान प्रकट हो तो आपका बीज वहाँ पहले से मौजूद रहे। शीघ्र आगमन बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि बड़े खाली स्थानों में जल्दी ही प्रकाश की प्यासी लताएँ और फर्न उग आते हैं और एक चटाई-सी बना देते हैं। हो सकता है कि ये बाद में आने वाले बीजों के अंकुरण में रासायनिक बाधा पैदा करें। इन खाली स्थानों को भरने वाली कई सफल प्रजातियाँ सबसे पहले पहुँचती हैं, जल्दी प्रजनन करती हैं और फिर प्रतिस्पर्धा की भेंट चढ़ जाती हैं। मगर कई अन्य प्रजनन में विलम्ब करती हैं एवं बढ़ती रहती हैं और कैनपी-निर्माता पेड़ बन जाती हैं।

जो प्रजातियाँ प्रकाश के छोटे खाली स्थानों में बढ़ने की विशेषज्ञ हैं वे आम तौर पर घनी कैनपी के नीचे की छाया में अंकुरित होती हैं, हालाँकि उन्हें प्रजनन-योग्य साइज़ हासिल करने के लिए खुलापन चाहिए होता है। कैनपी में छोटे-छोटे सुराख कहीं ज़्यादा संख्या में उपलब्ध होते हैं और बरसाती जंगल के कई पेड़ इन्हीं परिस्थितियों में बढ़ने के लिए अनुकूलित होते हैं। इन प्रजातियों के बीज आम तौर पर बड़े होते हैं और इनका बिखराव अपेक्षाकृत कम दूरी तक होता है क्योंकि इनकी मंज़िलें ज़्यादा पास-पास और

ज़्यादा संख्या में होती हैं। बड़े बीज का फायदा यह होता है कि इनमें जल्दी ही विस्तृत जड़ तंत्र बन जाता है जो बड़े पौधे बनने में सहायक होता है। बड़े बीजों में विद्यमान कार्बोहायड्रेट का भण्डार उन्हें यह क्षमता प्रदान करता है कि अंकुरण के बाद वे कोई रिक्त स्थान बनने की प्रतीक्षा कर सकें। छोटे खाली स्थान के ये महारथी बड़े खाली स्थानों में अच्छा प्रदर्शन नहीं करते क्योंकि वहाँ ये बड़े खाली स्थान के विशेषज्ञों की तेज़ वृद्धि के साथ होड़ नहीं कर पाते।

बड़े और छोटे खाली स्थान विशेषज्ञों के बीच कोई स्पष्ट विभाजन नहीं है। बरसाती जंगल के कई पौधे, खास तौर से निचली मंज़िल के पौधे और झाड़ियाँ किसी खाली स्थान के बगैर भी अंकुरित होती हैं और परिपक्व हो जाती हैं। खाली स्थान भी हर साइज़ के मिलते हैं - लगभग न के बराबर से लेकर किसी पहाड़ के पूरे के पूरे फलक के बराबर, जो भूस्खलन की वजह से खुल जाता है। हरेक प्रजाति के लिए यथेष्ट खाली स्थान की साइज़ अलग-अलग होती है। खाली स्थान बरसाती जंगल के पौधों के लिए एक विषमांग संसाधन है जो बहुत बिखरा हुआ होता है। विशेषीकरण के चलते प्रजातियों के बीच प्रतिस्पर्धा कुछ हद तक कम हो जाती है मगर इस प्रणाली में एक किस्म की बेतरतीबी भी है। कटिबन्धीय जंगल में जहाँ सैकड़ों वनस्पति प्रजातियाँ हैं और बीजों को बिखेरने वाले एजेंट भी सैकड़ों हैं, वहाँ हर खाली स्थान के लिए प्रजातियों के एक विशिष्ट समूह के सदस्यों के बीच प्रतिस्पर्धा होती है। यह असम्भव है कि किसी प्रजाति के पेड़ के गिरने पर उस खाली स्थान की पूर्ति उसी प्रजाति के पेड़ से होगी। इस बात की सम्भाविता की विश्वसनीय गणना करना तो और भी मुश्किल होगा कि क्षतिपूर्ति किन विभिन्न प्रजातियों द्वारा की जाएगी।

शीतोष्ण जंगल में नवीनीकरण के छात्र इस बात की सम्भाविता की गणना कर सकते हैं कि किसी बीच या मैपल वृक्ष के गिरने पर कौन-सी प्रजाति उसका स्थान लेगी। और तो और, वे किसी परिपक्व जंगल में कैनपी के संघटन की भविष्यवाणी भी कर सकते हैं। प्रिंसटन विश्वविद्यालय के हेनरी हॉर्न ने न्यू जर्सी जंगल के लिए एक सम्भाविता मैट्रिक्स विकसित किया है मगर उन्हें मात्र ग्यारह प्रजातियों को ध्यान में रखना था। दो-तीन सौ प्रजाति वाले किसी जंगल के लिए क्षतिपूर्ति सम्भाविता की गणना करने में महती कठिनाइयाँ हैं। यह जटिलता इस बात को रेखांकित करती है कि जब कोई प्रजाति वृक्ष गिरने से खाली हुई जगह पर कब्ज़ा करने की कोशिश करती है तो उसे किस ढंग की कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगाः उसे सैकड़ों विशिष्ट रूप से अनुकूलित प्रजातियों के साथ होड़ करनी होगी। पेड़ गिरने की दर और खाली स्थान की साइज़

मिट्टी के प्रकार, नमी, ढलान और ऊँचाई पर निर्भर करती है। ये सारे कारक किसी भी पेड़ के बीज-बिखराव के दायरे में बदलते हैं, इसलिए किसी भी प्रजाति की सफलता की भविष्यवाणी करना निहायत मुश्किल है।

नवीनीकरण की प्रक्रिया और भी पेचीदा हो जाती है क्योंकि कुछ प्रतिस्पर्धी प्रजातियों की एक पीढ़ी दो सदियों से भी ज़्यादा समय की होती है। जो प्रजाति क्रमशः अपने प्रतिस्पर्धी को विलुप्ति की ओर धकेलने की क्षमता विकसित कर रही है, हो सकता है कि इतने लम्बे समय में उसे किसी जलवायु परिवर्तन का या किसी बड़ी पर्यावरणीय घटना का सामना करना पड़े, जैसे भूकम्प, बाढ़, सूखा, आग या ज्वाला-मुखी का फटना, जो शायद प्रतिस्पर्धा की शर्तें ही बदल दे। इस तरह के व्यवधान और हादसों तथा साथ में पेड़ गिरने के बेतरतीब सिलसिले के चलते यह मुश्किल लगता है कि कटिबन्धीय जंगल कभी भी पूर्वानुमान योग्य साम्यावस्था (इक्विलिब्रियम) तक पहुँचेगा। क्लाइमेक्स समुदाय की अवधारणा, जिसका आशय है कि विभिन्न वनस्पति प्रजातियों की तुलनात्मक प्रचुरता की भविष्यवाणी की जा सकती है, शायद उच्चतर अक्षांशों के अपेक्षाकृत सरल जंगलों पर लागू करना सम्भव हो; अनछुए कटिबन्धीय बरसाती जंगल को तो एक चितकबरे, सतत् परिवर्तनशील तंत्र के रूप में ही देखना बेहतर होगा

चित्र-5: वनस्पतिशास्त्री मैग लोमैन, जो कैनपी पर शोध करती हैं।

जो काफी हद तक पेड़ों के गिरने की अपूर्वानुमेय (अन्प्रेडिक्टेबल) घटना का परिणाम होता है।

पेड़ के गिरने पर हड़बड़ी

जंगल में पेड़ों के गिरने के परिणाम सिर्फ वनस्पति नहीं बल्कि जन्तुओं के लिए भी महत्व रखते हैं। किसी पेड़ की ताज़ा गिरी हुई विशाल कैनपी बरसाती जंगल में बहुत ही रोमांचक स्थान होता है। ऊँचाइयों से घबराने वाले प्रकृतिविद् यहाँ उन ऑर्किड्स और कीड़ों के घोंसलों की झलक पा सकते हैं जो आम तौर पर नज़रों या पहुँच से दूर होते हैं। कैनपी कई अनूठी प्रजातियों को अपने में समाकर रखती है और यदि पेड़ न गिरते तो शायद

इन प्रजातियों का हमारा ज्ञान बहुत सीमित रहता। वैसे आजकल वैज्ञानिक रस्सियों और जुमरों (ऊपर चढ़ने का एक साधन, चित्र-5) की मदद से कटिबन्धीय बरसाती जंगल की जीवित कैनपी की ऊँचाइयों तक पहुँचने लगे हैं मगर आज भी वहाँ रहने वाले पौधों और जन्तुओं के बारे में मालूमात बहुत कम हैं। ऐसे उद्यमी प्रेक्षक आज भी एक-एक पेड़ तक सीमित रहते हैं और उन्हें वहाँ जो सारे जीव नज़र आते हैं, उनका संग्रह करके पहचान पाना अत्यन्त कठिन होगा। ताज़ा गिरे हुए पेड़ उन जीव वैज्ञानिकों के लिए मूल्यवान संसाधन हैं जो कटिबन्धीय बरसाती जंगलों की विविधता का अध्ययन व दस्तावेज़ीकरण करने का इरादा रखते हैं। और लगता है कि हर बार जब कोई पेड़ गिरता है तो कुछ नया लेकर गिरता है।

किसी बड़े पेड़ के पतन के बाद जो आपाधापी पैदा होती है वह बहुत प्रेरणास्पद होती है, खास तौर से कीट वैज्ञानिकों के लिए। हाल ही में गिरे हुए पेड़ का ताज़ा कटा हुआ तना शोरगुल करने वाली सिर्फिड मक्खी और कई सारे तड़क-भड़क वाले गुबरैलों को आकर्षित करता हैः लम्बे सींग वाला, कई इंच लम्बा, शरीर पर पीली और नारंगी पट्टियों का ज्यामितीय पैटर्न लिए हार्लेक्विन गुबरैला (*Acrocinus longimanus*, चित्र-6); गोल्डेन ब्युप्रेस्टिड वुड-बोरिंग गुबरैला; और बड़े-काले घुन (वीविल्स)। ये सब

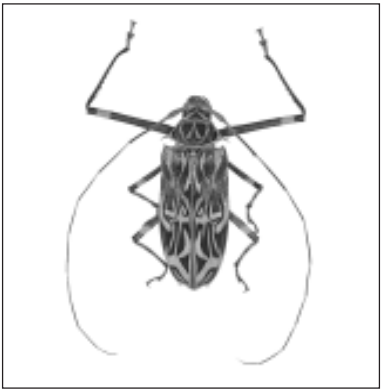

चित्र-6: हार्लेक्विन गुबरैला

अवतरित होते हैं, लकड़ियों से टपकते रस को चूसने और वहाँ अण्डे देने के लिए। कई परजीवी ततैये मक्खियों और गुबरैलों की अपरिपक्व अवस्थाओं में रुचि रखते हैं। ये ततैये पेड़ के लट्ठे पर गश्त लगाना शुरू कर देते हैं और फलभक्षी मक्खियों का हुजूम सड़ते हुए (किण्वित होते) रस पर मण्डराने लगता है। यदि खाली स्थान बड़ा और धूपदार हुआ तो लताओं और झाड़ियों पर फूलों की बहार आ जाती है। मकरन्द की आस में तितलियाँ, तथा फलों की आस में चमगादड़ और पक्षी पैशन लताओं की ओर खिंचे चले आते हैं। मॉर्निंग ग्लोरी मधुमक्खियों को, तो एहेलैण्ड्रा, हेलिकोनिया व अन्य नलीनुमा फूलों वाले पौधे हमिंगबर्ड्स को पुकारते हैं। ये पक्षी फूलों वाली हर पट्टी की भरपूर रक्षा करते हैं।

इनमें से कई पायोनीयर पौधे लगभग

साल भर बढ़ते रहते हैं, फलते-फूलते रहते हैं। इसलिए नदियों के किनारे, टापू, नदी के मोड़ और भूस्खलन जैसे प्रकाशित इलाके, जहाँ ये पायोनीयर पौधे उगते हैं, जन्तुओं के आकर्षण का केन्द्र होते हैं। जब शेष जंगल में उपलब्धता में मौसमी मन्दी होती है तो बन्दर तथा अन्य जन्तु इन सुपर खाली जगहों पर पहुँच जाते हैं। पायोनीयर पौधे अपनी वृद्धि को इतना अधिक महत्व देते हैं कि उनके पास अपने रासायनिक सुरक्षा साधनों पर खर्च करने को कुछ नहीं बचता। कीटों से लेकर स्लॉथ तक सारे शाकाहारी जन्तु खाद्य पत्तियों के इन नखलिस्तानों का लाभ उठाते हैं। ऐसा लगता है कि कुछ पक्षी रोशनी वाले खाली स्थानों के विशेषज्ञ होते हैं। वे यहाँ कीटों के उच्च घनत्व को देखकर पहुँच जाते हैं। कीटों का यह उच्च घनत्व और साथ में धूप शायद कई छिपकलियों को भी पेड़ गिरने या अन्य कारणों से बने खाली स्थानों की ओर खींच लाता है। जब बढ़िया धूप हो और छिपकलियाँ भरपूर मात्रा में उपलब्ध हों, तो साँप भी दौड़े चले आते हैं। कटिबन्ध के प्रकृतिविदों के बीच यह अप्रमाणित दन्तकथा है कि यदि बरसाती जंगल में टर्सिओपेलो या फर-डी-लांस जैसे सबसे भयानक साँपों को देखना है तो गिरे हुए पेड़ सबसे बढ़िया जगह है।

रोशनी वाले खाली स्थानों से जुड़े जन्तुओं को पेड़ गिरने की बेतरतीब घटनाओं द्वारा उपलब्ध कराए गए नए अवसरों के साथ तालमेल बनाकर जीना पड़ता है और उन्हें तब अलग किस्म की प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है जब ये खाली स्थान हरियाली से भर जाते हैं।

बरसाती जंगल में ऐसी घमासान प्रतिस्पर्धात्मक अन्तर्क्रियाएँ कभी भी एक स्थिरतापूर्ण, पूर्वानुमान योग्य अवस्था में नहीं पहुँच पातीं जहाँ प्रजातियों के बीच प्रतिस्पर्धा कुछ प्रजातियों का उन्मूलन कर दे। सम्भवतः कटिबन्धीय बरसाती जंगलों की समृद्धता और विविधता उनकी उम्र या पूर्वानुमान-योग्यता के कारण नहीं बल्कि पेड़ों के गिरने की वजह से होने वाले सतत् परिवर्तन और व्यवधानों के कारण है।

ऐड्रियन फोर्सिथः पिछले तीस सालों से ट्रॉपिक्स में शोध और कंज़र्वेशन करते आ रहे हैं। उत्तर अमेरिका के प्रकृति और विज्ञान के बेहतरीन लेखकों में से एक हैं।

कैन मियाटाः स्मिथसोनियन इंस्टिट्यूशन में पोस्ट-डॉक्टोरल फैलोशिप करने के बाद उन्होंने नेचर कंज़र्वेन्सी के साथ काम किया। 32 साल की अल्प आयु में उनका निधन हो गया।

अँग्रेज़ी से अनुवादः सुशील जोशीः एकलव्य द्वारा संचालित स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। विज्ञान शिक्षण व लेखन में गहरी रुचि।

यह लेख 'ट्रॉपिकल नेचर - लाइफ एंड डैथ इन द रेन फॉरेस्ट्स ऑफ सैंट्रल एंड साउथ अमेरिका' किताब से लिया गया है जो साइमन एंड शूस्टर द्वारा 1987 में छापी गई थी।

सुतली और हुनर का मेल!

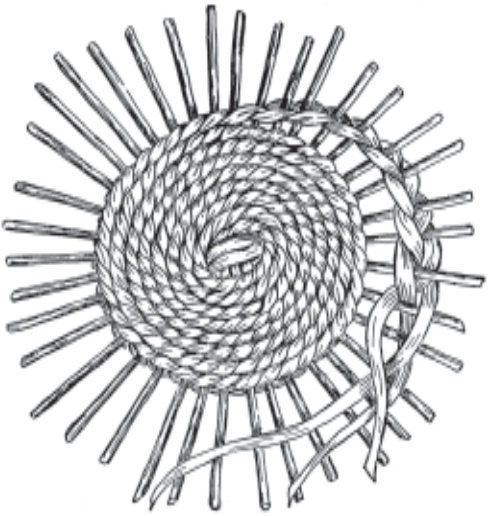

जैसे - संदर्भ

एक प्रति का मूल्य 30 रुपए
एक साल की सदस्यता 150 रुपए
तीन साल की सदस्यता 400 रुपए

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें

एकलव्य
ई-10, बी.डी.ए. कॉलोनी, शंकर नगर,
शिवाजी नगर, भोपाल, म.प्र. पिन 462016
फोनः 0755 - 2671017, 2550976
www.eklavya.in/sandarbh
ई-मेलः sandarbh@eklavya.in

शिक्षकों की कलम से

विगत कुछ अंकों से हमने एक नया कॉलम शुरू किया है जिसके माध्यम से शिक्षक एवं शिक्षक प्रशिक्षक अपने अनुभवों को साझा कर सकें। इस बार तीन अनुभव प्रस्तुत हैं। इन पर अपनी राय दीजिए। साथ ही, आपसे एक छोटी-सी अपेक्षा होगी कि आप अपने अनुभवों को भी हमारे पास ज़रूर भेजिए।

1. टेसू राजा बीच बाज़ार ..... रवि कान्त
2. सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन ..... दिलिप चुघ
3. बच्चों के सवाल ..... केवलानन्द काण्डपाल

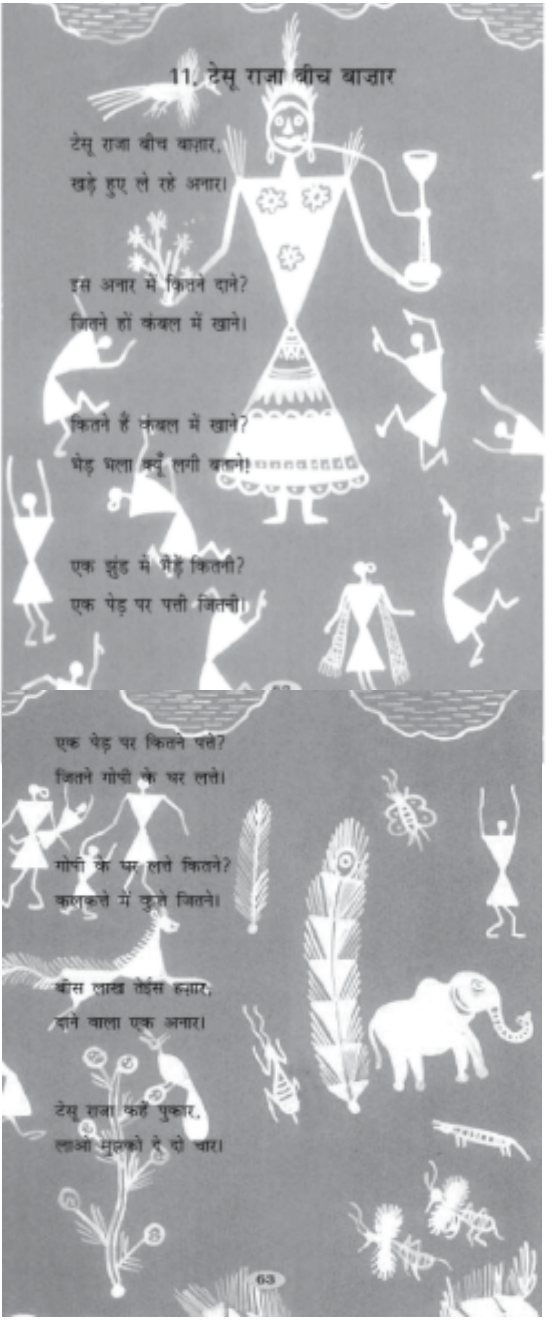

टेसू राजा बीच बाज़ार

रवि कान्त

अगर आप कविता सिखाने का एकमेव तरीका यह मानते हैं कि उसे तोते की तरह रट लिया जाए और पूछने पर वैसे-का-वैसा सुना दिया जाए, इसके साथ अगर यह भी मानते हों कि अभी इस उम्र के बच्चों को कविता का मतलब समझाने की ज़हमत उठाने की कोई ज़रूरत नहीं, इसका मतलब तो वक्त आने पर इन रट्टू तोतों के सामने अपने आप ही उजागर होता रहेगा तो आपके लिए किसी भी उम्र के बच्चों को कोई भी कविता सिखाना यानी रट कर याद करवाना कोई खास मुश्किल काम नहीं है। भले ही वह काम बच्चों के लिए बेहद बोरियत भरा व मुश्किल हो।

लेकिन अगर आप इस बात में यकीन रखते हों कि कोई कविता या कहानी बच्चों को इस तरह से पढ़ाई जानी चाहिए कि बच्चे उसका मतलब समझ पाएँ, उस कविता को सुनकर अपने दिमाग में उससे जुड़ी तस्वीरें गढ़ पाएँ, अपनी कल्पना को पंख लगा पाएँ और पूछने पर इन सब चीज़ों के बारे में बता पाएँ, कविता में आई भाषा का आनन्द उठा पाएँ, उसके साथ खिलवाड़ कर पाएँ और अगर मुमकिन हो तो उसके ज़रिए ज्ञान के किसी खास इलाके में चहलकदमी कर पाएँ, तो 'टेसू राजा बीच बाज़ार' कोई आसान कविता नहीं है। किसी भी चिन्तनशील अध्यापिका के सामने यह एक से ज़्यादा तरह की चुनौतियाँ पेश कर सकती है।

अर्थ के स्तर पर चुनौती

इस कविता में सबसे पहली व बड़ी चुनौती अर्थ के स्तर पर है। इस कविता की मुश्किल ही यह है कि यह ज्ञान के एक दूसरे इलाके गणित में पाई जाने वाली गिनने की अवधारणा के साथ भाषाई तरीके से खिलवाड़ करते हुए यह दावा भी पेश करती है कि ज्ञान की सभी किस्मों की बुनियाद भाषा में समाहित हो सकती है। लेकिन इस खिलवाड़ में यह गणित की अवधारणा को तोड़ती-मरोड़ती नहीं है बल्कि उसकी ताकत व कमज़ोरियों को ही उजागर करती है। इस कविता का केन्द्रीय भाव गिनने से बचने के हज़ार बहाने करते हुए गिनने की ऐसी तरकीब खोजना है जिससे कि बिना गिने ही गिनने का काम हो जाए। इसके चलते यह गिनने के ऐसे नुस्खे का इस्तेमाल करती है जिसमें किसी एक समूह की चीज़ों की संख्याओं को गिनने से पीछा छुड़ाने के लिए उसकी दूसरे समूहों की चीज़ों से तुलना की जाती है। यह पूरी कविता, जब तक गिनने से बचा जा सके तब तक उसके लिए वाजिब बहाने तलाशने की एक यात्रा है जो आखिर में एक ऐसी संख्या के मुकाम तक पहुँचती है जिसकी कल्पना भी कर पाना कक्षा-2 के बच्चों के लिए मुश्किल काम है। लेकिन संख्या की उस अवधारणा का नाम गढ़ पाना, उसे समझे बिना भी मुमकिन है। इसके लिए आपको कुछ खास संख्याओं के नामों को एक खास

क्रम में बोलना भर है। अध्यापिका के सामने चुनौती यह भी है कि वह ऐसा क्या करे कि कविता के आखिर में बच्चे अपने दिमाग में उस संख्या के नाम से जुड़े अर्थ की कोई साफ-सुथरी तस्वीर देख पाएँ। जब तक यह बात अध्यापिका के सामने साफ नहीं होगी वह इस कविता का अर्थ बच्चों के सामने उजागर कर पाने में काफी हद तक नाकाम ही रहेगी।

भाषा के स्तर पर चुनौती

यह कविता आपके सामने भाषा के स्तर पर भी चुनौती पेश करती है। यह कविता तुक के ज़रिए आगे बढ़ती है या यह कहें कि धकेली जाती है, लेकिन यह तुक पूरी तरह से बेतुकी भी नहीं है। यानी इसमें हर कदम पर तुक सिर्फ आखिरी आवाज़ों के मेल के ज़रिए ही नहीं मिलाई गई है बल्कि हर बार तुक मिलाने का भी कोई-न-कोई तर्क गढ़ा गया है। वही तर्क जो बिना गिने, गिनने का बहाना करने में है। यह तुक इस कविता के अन्तरों को याद रखने में भी मदद करती है। पहले दो अन्तरों से साफ हो जाता है कि यह कविता तुकान्त ही होने वाली है और इसके साथ ही हर अन्तरे में तुक बदलने वाली है। तो इस कविता को सुनते व समझते व याद रखते समय आप पहली पंक्ति में आए आखिरी शब्द के आधार पर तुकान्त वाले शब्द का अनुमान भी लगा सकते हैं। लेकिन यह मनमाना नहीं है बल्कि इसके लिए आपके दिमाग में पूरी पंक्ति का अर्थ साफ होना चाहिए। इस कविता के वाक्य दो समूहों के बीच तुलना करके गिनने का बहाना करने के तर्क की डोर से बँधे आगे की ओर सरकते रहते हैं।

शिक्षाशास्त्रीय चुनौतियाँ

अध्यापिका के लिए इस कविता में आखिरी व सबसे अहम चुनौती शिक्षाशास्त्रीय है। यह कि इसका अर्थ बच्चों के सामने कैसे उजागर किया जाए या उनके दिमाग में इसका मतलब कैसे गढ़ा जाए। यह कविता सिर्फ पढ़ देने भर से समझ में आ जाने वाली नहीं है। वैसे भी सांस्कृतिक बहुलता वाले हमारे देश में हर जगह के बच्चों से यह उम्मीद करना नादानी से ज़्यादा कुछ नहीं कि वे इस कविता को सिर्फ सुनकर समझ लेंगे, जो कि किसी एक खास इलाके में प्रचलित है। सिर्फ सुनकर समझ लेने के रास्ते में आने वाली कई बाधाओं की पहचान ज़रूरी है ताकि उनसे जूझने के तरीके खोजे जा सकें।

पहली, जैसे, जिन इलाकों में यह कविता प्रचलित है वहाँ के बच्चे तो हो सकता है कि इसका अर्थ सुनकर या पढ़कर आसानी से समझने की दिशा में बढ़ जाएँ। हो सकता है कि उन्होंने त्यौहारों में इस किस्म की कई कविताएँ अपनी भाषा में सुन रखी हों लेकिन बाकी दूसरे इलाकों के बच्चों के लिए यह इतना आसान नहीं है। हमारे देश में हिन्दी भाषी माने जाने वाले कई इलाकों में घरों में हिन्दी

नहीं बोली जाती फिर भी उन्हें स्कूल की किताबों में हिन्दी और हिन्दी कविताएँ पढ़नी पड़ती हैं। यानी वे उस भाषा के मौखिक स्वरूप से न तो ठीक से परिचित होते हैं और न ही उनका इस पर पूरा अधिकार होता है। इसलिए वे भी इसे सिर्फ पढ़ या सुनकर समझ पाएँ इसकी सम्भावनाएँ कम ही हैं।

दूसरी, यह एक खास शैली की कविता है, इसमें पूरी कविता को सुनकर किसी एक घटना या दृश्य की तस्वीर दिमाग में नहीं उभरती। पहली दो पंक्तियों में कविता का सन्दर्भ बनाने के बाद वाले अन्तरों में हर पंक्ति में एक नया दृश्य बनता है और आखिरी अन्तरों में उस सन्दर्भ को शुरुआती घटना से जोड़ते हुए समेकन किया गया है। बीच में आए अलग-अलग अन्तरों से बनने वाले दृश्यों का आपस में कोई नज़र आने लायक सम्बन्ध दिखाई नहीं पड़ता। बीच के अन्तरों में यह कविता तुक और तर्क की महीन डोर थामे आगे बढ़ती रहती है।

तीसरी, छोटे बच्चों के सामने कविता का अर्थ उजागर करने का एक मशहूर तरीका उस कविता को हाव-भाव से करवाना होता है। इस तरीके का इस्तेमाल यहाँ भी किया जा सकता है लेकिन इस कविता के लिए हाव-भावों को चुनना आसान नहीं है। आपको हर अन्तरे में किसी बिना गिनी संख्या को हावभाव से दर्शाना है। तो यहाँ आपका काम सिर्फ हाव-भाव के ज़रिए कविता का मतलब सम्प्रेषित करने से चलने वाला नहीं है। आपको इस कविता के लिए कुछ अन्य तरीके भी खोजने होंगे, जैसे कविता पर बातचीत करना, कविता की पंक्तियों के अर्थ को समझने में मदद करने के लिए चित्र कार्डों का इस्तेमाल करना, कविता पर कठपुतली का अभिनय दिखलाना, हर अन्तरे पर चित्र बनाना या बनवाना आदि।

इस कविता के अर्थ उजागर करने का एक सबसे बेहतरीन तरीका इस पर बातचीत करना हो सकता है। बातचीत को अधिक सार्थक व विषय केन्द्रित करने के लिए चित्र कार्डों का भी इस्तेमाल किया जा सकता है। कविता के हर अन्तरे को पढ़कर, सुनाकर बच्चों के साथ उसके मतलब पर बातचीत की जा सकती है। आप चाहें तो बड़े व पूरे चार्ट पर कम्बल, भेड़ों के झुण्ड, पेड़ के अनगिनत पत्तों आदि की तस्वीर बना कर बातचीत के वक्त उनका इस्तेमाल कर सकते हैं। हर कदम पर गिनने की मुश्किलों पर बात करते हुए उस अन्तरे की शुरुआत में दी गई चीज़ गिनना छोड़कर अगली चीज़ को गिनने की बात की जा सकती है और फिर से उसे गिनने में आने वाली मुश्किलों को गिनाया जा सकता है।

इस कविता के आखिर में बच्चों को बीस लाख तेईस हज़ार दानों वाले एक अनार के आकार की कल्पना करवाना एक रोमांचक अनुभव हो सकता

है। ज़रा सोच कर देखिए कि कक्षा दो के बच्चों की मुठ्ठी में आ जाए ऐसे किसी अनार में कितने दाने हो सकते हैं, पचास या हद-से-हद सौ। अगर एक सौ दानों वाला अनार बच्चों की मुट्ठी में आ सकता है तो इसका दस गुना यानी एक हज़ार दानों वाले अनार का आकार कितना बड़ा होगा? फिर एक हज़ार दानों वाला अनार इतना बड़ा हो तो उसके दस गुना दानों वाले यानी दस हज़ार दानों वाले अनार का आकार कितना बड़ा होगा? फिर उसके दस गुना दानों यानी एक लाख दानों वाले अनार का आकार कितना बड़ा होगा? इसी तरह आगे बढ़ते हुए दस लाख दानों वाले अनार के आकार और बीस लाख दानों वाले अनार के आकार का अनुमान लगवाया जा सकता है। हर कदम पर आप बच्चों को अपने हाथों की मदद से अनार के आकार को दर्शाने के लिए कह सकते हैं। जब लाखों दानों की बात चल रही हो तो हज़ारों दानों को छोड़ा भी जा सकता है, और न छोड़ना चाहें तो उन्हें भी शामिल कर सकते हैं। आखिर में आप बच्चों को याद दिला सकते हैं कि ऐसा सिर्फ एक नहीं, चार-चार अनार हैं और ऐसे चार अनार लेकर टेसू राजा घर लौट रहे हैं।

लेकिन अभी भी आप को लग सकता है कि अनार की मुकम्मल तस्वीर बनी नहीं। इस संख्या को तस्वीर में तब्दील करने के लिए आप यह कल्पना भी करवा सकते हैं कि किसी बच्चे का पेट कितने दानों वाले अनार से भर जाएगा। इस तरह बड़े होते जाते अनार से वह कितने-कितने दिनों तक बगैर इस बात की परवाह किए अनार खा सकता है कि एक अनार और सौ बीमार। उसका बीस लाख तेईस हज़ार दानों वाला एक ही अनार कई बीमार-तो-बीमार, अच्छे खासे तन्दुरुस्तों के पेट भी भर सकता है।

आप यह भी कल्पना करवा सकते हैं कि अगर इतने बड़े अनार के अन्दर घुसकर खाना शुरू करें तो क्या मज़ा आए, साथ में अपने दोस्तों को भी उसके अन्दर ले जाएँ। अनार के एक-एक हिस्से में रखे दानों को खाना शुरू करें और जब पूरे अनार के हर एक दाने को आप और आपके दोस्त खा चुके हों तो बाहर आकर देखें कि आपने कितने सारे कमरों की इमारत में घूमते हुए अनार के दानों की दावत उड़ाई।

आप देख सकते हैं कि इस कविता का जादू ही इस बात में है कि तीन-चार आवाज़ों के शब्दों में सुनाई देने वाली और अंकों में सूत भर जगह घेरने वाली यह संख्या जब अर्थ में तब्दील की जाती है तो एक विशाल आकार के अनार में बदल जाती है जिसमें एक चटख लाल रंग की गोल इमारत में कई छोटे-छोटे पीले रंग के कमरों में ठुँसे अनार के चमकदार व रसीले दाने नज़र आने लगते हैं। इस तस्वीर में और जान डालने के लिए आप बच्चों को याद दिला सकते हैं

कि - ज़रा सोचिए, बीस लाख तेईस हज़ार दानों वाले चार अनार अपने हाथों में थामे घर लौटते टेसू राजा की हथेली खुद कितनी बड़ी होगी और ऐसी हथेली वाले टेसू राजा स्वयं कितने विशालकाय होंगे। तो बन गया न दिमाग का फालूदा।

इस कविता के अर्थ में की गई घुसपैठ शब्दों में लिखी जाने वाली चार इंच लम्बी संख्या को कल्पना में एक विशालकाय अनार के आकार में तब्दील कर देने की ताकत रखती है। अगर कोई अध्यापिका इस कविता को पढ़ाते वक्त इसके अर्थ को बच्चों के सामने उजागर कर पाती है तो कोई वजह नहीं कि वह उनकी आँखों में चमक व चेहरे की दमक से अपने दिल को भी खुशी से धड़कता महसूस न कर पाए। आखिर एक अध्यापिका के लिए इससे बढ़कर खुशी की बात और क्या हो सकती है कि वह लिपि के ज़रिए जिस अपार विस्तार वाली जादुई दुनिया को खुद महसूस कर पाती है, जिसके बारे में सोच समझ पाती है, उसकी एक झलक बच्चों को दिखलाकर, उन्हें भी उस दुनिया में दाखिल करवा पाने में कुछ कामयाबी हासिल कर पाए।

रवि कान्तः शैक्षिक सलाहकार के तौर पर विभिन्न संस्थाओं, अध्यापकों के साथ काम। शिक्षण सामग्री, पाठ्यचर्या व पाठ्यपुस्तकों और प्रशिक्षण सन्दर्शिकाओं आदि का निर्माण, शैक्षिक शोध और अनुवाद। गणित शिक्षण में खास रुचि। जयपुर में निवास।

कविता और तस्वीर एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा प्रकाशित रिमझिम, कक्षा-2 से साभार।

टेसू राजा बीच बज़ार
(निरंकारदेव सेवक)
एकलव्य का प्रकाशन
मूल्यः 40 रुपए

इस किताब को ऑन लाइन एकलव्य के पिटारा कार्ट से भी खरीद सकते हैं।
विज़िट कीजिए www.pitarakart.in

सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के बहाने...!

दिलिप चुघ

राजस्थान की राज्य सरकार, शिक्षा का अधिकार कानून, 2009 के तहत सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन की अवधारणा को बड़े व्यापक पैमाने पर अमली जामा पहनाने की ओर अग्रसर है। इस सत्र (2014-2015) में राजस्थान के प्रत्येक ज़िले के दो ब्लॉक के सभी प्राथमिक और उच्च प्राथमिक विद्यालयों में सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन को लागू किया जा रहा है। हमारे टोंक ज़िले में भी जून माह में चुने गए ब्लॉकों के शिक्षकों के प्रशिक्षण भी हो चुके हैं। सर्व शिक्षा अभियान (एसएसए) के आँकड़ों के अनुसार टोंक ज़िले के लगभग 88 प्रतिशत शिक्षक इन प्रशिक्षणों में भागीदारी भी कर चुके हैं। इन प्रशिक्षणों में एक अवलोकनकर्ता के तौर पर मैंने भी हिस्सा लिया है। ये प्रशिक्षण मुझे और मेरे कुछ अन्य साथियों को शिक्षकों के ठहराव और भागीदारी के सन्दर्भ में पिछले सालों की तुलना में बेहतर लगे। एक अलग-सी मूल्यांकन नीति और उसके प्रपत्रों को समझने में एक स्वाभाविक जिज्ञासुपन और रुचि दिखाई देना लाज़मी है और फिर बात अगर दस्तावेज़ीकरण की हो तो थोड़ी ज़्यादा सजगता आ जाना भी स्वाभाविक है।

राजकीय विद्यालयों में...

जून की भीषण गर्मी से प्रभावित प्रशिक्षणों के बाद जुलाई-अगस्त का माह राजकीय विद्यालयों में शिक्षकों और प्रधानाध्यापकों से मेल मिलाप का रहा। इस दौरान मेरी स्वाभाविक जिज्ञासा सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के अमलीकरण को समझने में थी, क्योंकि मैंने भी कभी एक वैकल्पिक विद्यालय के शिक्षक के तौर पर ऐसी ही प्रक्रियाओं से दो-दो हाथ किए थे। इन मुलाकातों ने मुझे कुछ-कुछ समझने

के मौके ज़रूर दिए जिनका सीधा सम्बन्ध सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन की अवधारणा से है। इस सन्दर्भ में इन विद्यालयों में घटी कुछ खास घटनाओं का ब्यौरा यहाँ प्रस्तुत है...

विद्यालयः एक

हम इस विद्यालय के संस्था-प्रधान के साथ ही विद्यालय पहुँचे। उस समय तक दो शिक्षिकाओं ने सभा कार्यक्रम को अंजाम दे दिया था। एक कक्ष में स्टाफ के साथ अनौपचारिक बातचीत के बाद गुरुजी के साथ गणित की कक्षा देखने का मौका मिला। गुरुजी ने बच्चों को जोड़ के सवाल हल करने को दिए थे। बच्चों के जवाब वे मुझे भी दिखाने लगे। बच्चों के साथ बातचीत हो ही रही थी कि एकाएक ही गुरुजी ने एक बच्चे की ओर इशारा कर मुझसे कहा, "यह लड़का सीख नहीं पा रहा है। बाकी तो सब जानते हैं...ये रोज़ आते हैं। इनसे पूछ लो कुछ भी।"

गुरुजी कक्षा चार के बच्चों को जोड़ पर काम करवा रहे थे। मैंने भी उनके साथ कक्षा तीन के बच्चों के साथ मौखिक जोड़-घटाव पर बच्चों के साथ काम किया तो एक बच्चे ने पीछे बैठे एक बच्चे के बारे में मुझे बताया कि, "या तो काई कोणी आवे।"

इसी विद्यालय में हिन्दी की एक शिक्षिका ने अनियमित आने वाले कुछ बच्चों की ओर इशारा करते हुए कहा, "ये दो-तीन बच्चे हैं जो सीख नहीं पा रहे। यह (एक बच्चे का नाम लेते हुए) तो रोज़ आता है फिर भी कुछ नहीं सीखा सर, क्या करें?"

विद्यालयः दो

इस विद्यालय में हम सभी पहली बार गए थे। प्रातःकालीन सभा की प्रार्थना के बाद प्रधानाध्यापक से कार्यक्रम के बारे में बातचीत करने, उनके साथ कक्ष में पहुँचे। बातचीत शुरू होती इससे पहले तीन शिक्षक भी कक्ष में आ गए। ठीक से परिचय हुआ तो वे स्वतः ही विद्यालय की कई समस्याएँ हमें बताने लगे जैसे, माता-पिता का जागरूक ना होना, बच्चों का गृहकार्य न करके लाना, प्रायवेट स्कूलों की वजह से नामांकन हर साल कम होना आदि, आदि। ये सभी समस्याएँ बताते हुए एक शिक्षक ने कहा, "फिर भी जो बच्चे नियमित आते हैं आप उनका स्तर देख लो। हमारे बच्चों का अन्य स्कूलों से अच्छा ही होगा।" एक अन्य शिक्षक ने सहमति जताते हुए कहा, "जो बच्चे नियमित आ रहे हैं उनका स्तर आपको अच्छा ही मिलेगा और जो नियमित आ ही नहीं रहे हैं वो कैसे सीखेंगे।" तीसरे शिक्षक ने कहा, "नहीं सर, स्तर तो अच्छा है पर मेरी कक्षा के कुछ बच्चे (चार बच्चों के नाम लिए) तो नियमित आते हैं फिर भी नहीं सीख पा रहे, क्या करूँ?" पहले वाले शिक्षक ने फिर से कहा, "अब सर, ये बच्चे तो मन्दबुद्धि हैं, उनका क्या करें। वो नहीं सीख पाएँगे।"

विद्यालयः तीन

मैं और मेरे एक साथी इस विद्यालय में लंच के बाद पहुँचे। विद्यालय में बच्चियाँ यहाँ-वहाँ घूम रहीं थीं। शिक्षिकाएँ कक्ष के बाहर बरामदे में कुर्सियाँ जमाए, वार्तालाप में मशगूल थीं। कक्ष में प्रधानाध्यापक जी के साथ कुछ बातचीत के बाद लगा बाहर बैठी शिक्षिकाओं के साथ सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन जैसे ज्वलन्त मुद्दे पर कुछ बातचीत की जाए। शिक्षिकाओं के साथ औपचारिक परिचय के बाद की बातचीत में धीरे-धीरे स्कूल के और मुद्दे खुलने लगे। वही बातें, बच्चों का अनियमित आना, गृहकार्य नहीं करना आदि, आदि। इसी बातचीत में एक शिक्षिका ने कहा, "कुछ बच्चे तो सर सीख ही नहीं पा रहे। एक बच्ची है जो कुछ सीख ही नहीं पा रही।" इसी दौरान वह बच्ची शिक्षिका को स्कूल में घूमती हुई दिख जाती है। वो उसे तत्काल अपने पास बुलाकर हमें बताती है, "यही है सर वो बच्ची।" बच्ची झेंपते हुए अपनी बाजू छुड़ा अन्दर कमरे में भाग जाती है।

जो कुछ हमने कहा और सोचा

तीनों विद्यालयों के घटनाक्रम में कई सारी कॉमन बातें हम देख सकते हैं। लेकिन एक बात जिसे सुन मैं मन-ही-मन विचलित होता रहा था वो थी बच्चे/बच्ची पर मन्दबुद्धि या होशियार होने की लेबलिंग करना। हर बार हमने बेहद संजीदगी से कुछ उदाहरणों के साथ और कुछ वाकये सुनाकर शिक्षकों को उनके लेबलिंग वाले नज़रिए पर पुनर्चिन्तन के लिए विवश किया। हमने चर्चा के दौरान उन्हें बतलाया कि ऐसे बच्चे घर से स्कूल तक तो स्वयं आ जाते हैं। ये सारे बच्चे घर के काम जैसे आटा लगाना, दुकान से कुछ सामान लाना आदि सब अपने विवेक से कर लेते हैं। पेड़ पर चढ़ना, नदी में तैरना जैसे बहुत-से हुनर इन्हें आते हैं। ऐसे में सीखने की क्षमता तो इन बच्चों में भी है जिन्हें आप कमज़ोर या मन्दबुद्धि कह रहे हैं। हमारी बातों और इन उदाहरणों, वाकयों का क्या असर होगा यह तो समय बताएगा पर हमने पूरी कोशिश की।

मैंने वापस आकर सोचा कि शिक्षकों द्वारा कक्षा में मेरी उपस्थिति के दौरान ही बच्चों की लेबलिंग करने के पीछे क्या मकसद रहा होगा। मुझे कुछ बातें सूझीं -

- शायद वे यह बताना चाह रहे थे कि हम बच्चों को कितने अच्छे से जानते हैं।
- कुछ बच्चे सीख नहीं पा रहे और उनके लिए हम बहुत चिन्तित हैं।
- मैं जानता/ती हूँ कि बच्चे के न सीख पाने का कारण उसकी स्वयं की बुद्धिमत्ता में ही कुछ कमी होना है।

इस तरह के कुछ और भी मन्तव्य हो सकते हैं पर पहले दो मन्तव्य मुझे

सार्थक जान पड़ते हैं। ये तो शिक्षक की एक मूलभूत ज़रूरत है कि बच्चों के शैक्षणिक स्तर का उन्हें ठीक से अन्दाज़ा हो। ऐसा होने से वे प्रत्येक बच्चे के लिए अपनी शैक्षणिक योजनाएँ और प्रभावी बना सकते हैं। लेकिन उपरोक्त विद्यालयों के घटनाक्रम को देखें तो ऐसा प्रतीत होता है कि शिक्षकों का बच्चों के बारे में उनके व्यक्तिगत स्तर और क्षमताओं की जानकारी रखने के पीछे ये उद्देश्य गौण है। यहाँ तो शिक्षकों ने स्वयं अपने मन में और बच्चों के बीच भी यह स्थापित कर लिया है कि न सीख पाने का कारण बच्चे की स्वयं की बुद्धि क्षमता है या विद्यालय में नियमित उपस्थित न होना। यहाँ तक कि बच्चे भी आपस में इस तरह की लेबलिंग और ऐसे विभाजन करने लगे हैं। मुझे यह बहुत ही चिन्ताजनक स्थिति लगती है। शोधों के ज़रिए पहले ही यह ज्ञान निर्मित हो चुका है कि बच्चों के सीखने को शिक्षक की मान्यताएँ और नज़रिया काफी हद तक प्रभावित करते हैं। यह बहुत सामान्य-सी बात है कि यदि हम किसी व्यक्ति या बच्चे को किसी दूसरे व्यक्ति या समूह के समक्ष कमज़ोर या निम्न दर्ज़े का बताएँगे तो उस व्यक्ति की अस्मिता को चोट पहुँचेगी और ऐसा चलते रहने पर वह कभी अपने आप को सीखने-सिखाने की प्रक्रियाओं से जोड़ नहीं पाएगा।

हालाँकि यहाँ पर मैंने केवल तीन स्कूलों में हुई बातचीत के उदाहरण दिए हैं लेकिन शिक्षकों द्वारा बच्चों के बारे में ऐसी टिप्पणियाँ प्रशिक्षणों और अनौपचारिक बातचीत में गाहे-बगाहे सुनाई दे ही जाती हैं।

ध्यान रहे, इस पूरे लेखन में अपनी बात रखने का मेरा उद्देश्य कदापि यह स्थापित करना नहीं है कि बच्चों के साथ ऐसे व्यवहार के पीछे केवल ये शिक्षक ही दोषी हैं। शिक्षक ऐसा क्यों करते हैं इसका अलग से एक समाजशास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया जा सकता है, और शायद इस पर एक अलग से अध्ययन और लेखन की ज़रूरत भी है। लेकिन इस लेख में मेरा मुद्दा एक गहरे अन्तर्विरोध की ओर संकेत करना है जो कि हमारे शिक्षक वर्ग के मन में जड़ें जमाए बैठीं इन मान्यताओं, विश्वासों और सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन की अवधारणा के बीच है।

सी.सी.ई. का दस्तावेज़

राजस्थान प्रारम्भिक शिक्षा परिषद द्वारा सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन की समझ के लिए जारी किए गए एक दस्तावेज़ के पृष्ठ-4 पर NCF 2005 से लिया गया यह उद्धरण इस बात को एकदम स्पष्ट रूप से व्यक्त करता है-

"बच्चों को नाम देना जैसे - धीमी गति से सीखने वाला/ होशियार/ समस्यात्मक विद्यार्थी - ऐसे विभाजन अधिगम की सारी ज़िम्मेदारी विद्यार्थी पर डाल देते हैं व शिक्षणशास्त्र की भूमिका पर से ध्यान हटा देते हैं।"

विद्यालयों की घटनाओं को उपरोक्त बात के सन्दर्भ में देखा जाए तो इनके बीच साफ तौर पर एक अन्तर्विरोध नज़र आता है। इन घटनाओं से एकदम विपरीत ही संकेत मिल रहे हैं। शायद दस्तावेज़ में लिखी हुई बात की समझ पूरी तरह से अभी शिक्षक साथियों तक पहुँची नहीं है।

सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन की अवधारणा का एक उद्देश्य भी यही है कि बच्चों के स्तर के आकलन का उपयोग शिक्षक अपनी योजना में रणनीतिक बदलाव करने और उसे प्रभावी बनाने के लिए करें, न कि आरम्भिक स्तर के बच्चों पर फेल-पास या किसी और तरह का ठप्पा लगाने के लिए।

स्थितियों को समझने पर विचार यह आता है कि जब तक हमारे शिक्षक बच्चों के सीखने-सिखाने से जुड़ी आधारभूत मान्यताओं को आत्मसात न कर लें तब तक सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन जैसे बड़े बदलाव को अमल में लाना बहुत दूर की उम्मीद है। और अगर इसे लागू किया भी जाएगा तो शिक्षक समाज शायद इस अवधारणा के साथ न्याय नहीं कर पाएगा। अभी तक के विद्यालयों के अवलोकन तो इसी बात को पुख्ता करते नज़र आ रहे हैं। यही स्थिति रही तो कल्पना कीजिए हमारे यही शिक्षक कुछ माह पश्चात् सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के दस्तावेज़ों की पूर्ति कर रहे होंगे और किसी जानकार आगन्तुक के आने पर भरी कक्षा में बड़ी ही साफगोई और मासूमियत से कह रहे होंगे, "देखिए साब, ये तो वे 3 बच्चे हैं जो रोज़ आते हैं और सीखते हैं और इनकी तो

A-ग्रेड है और ये 4 बच्चे ऐसे हैं जिनका कुछ भी कर लो साब ये पहले भी नहीं सीखे और अब भी E-ग्रेड में हैं। चाहे तो आप इनका पोर्टफोलियो भी देख सकते हैं। तो अब करें क्या?"

इस पूरे परिदृश्य में अब क्या किया जाए, गोया कि सरकार को तो इसे लागू करना ही होगा। यह सवाल मन में आते ही मुझे लगता है कि रीडिंग कैम्पेन की भाँति व्यापक स्तर पर एक अभियान चलाकर इस तरह की मान्यताओं और नज़रिए पर शिक्षक समुदाय को सोचने हेतु प्रेरित किया जाए और दूसरी ओर सभी ज़िलों में सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन की समझ रखने वाले स्रोत समूह का निर्माण हो और समूह ब्लॉक स्तर पर होने वाली सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन की मासिक बैठकों में इस विषय पर शिक्षकों के साथ गहन चर्चा करे। तब ही सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन को अमल में लाने का कुछ धरातल तैयार होगा।

दिलिप चुघः हिन्दी साहित्य में स्नातकोत्तर और शिक्षा में स्नातकोत्तर जारी। पिछले 12 वर्ष शिक्षा में अलग-अलग संस्थाओं के साथ काम में बिताए। फिलहाल, अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, टोंक में कार्यरत। बच्चों की आरम्भिक शिक्षा से जुड़े मुद्दों पर अध्ययन, लेखन और विमर्श में रुचि।

सभी चित्र व सज्जाः कनक शशिः स्वतंत्र कलाकार के रूप में पिछले एक दशक से बच्चों की किताबों के लिए चित्रांकन कर रही हैं। एकलव्य, भोपाल के डिज़ाइन समूह के साथ कार्यरत।

इन स्कूलों में भ्रमण सत्र 2014-15 में किया गया था।

बच्चों के सवाल

केवलानन्द काण्डपाल

बच्चों के बारे में हमारी रूढ़ अवधारणा यह है कि बच्चे सीखना नहीं चाहते, चीज़ों को जानना-समझना नहीं चाहते। ऐसे आरोप अक्सर सरकारी विद्यालय के बच्चों पर आसानी से मढ़ दिए जाते हैं। इन आक्षेपों के गम्भीर सामाजिक निहितार्थ हैं। इन विद्यालयों में प्रायः ऐसे वर्ग एवं सामाजिक समूहों के बच्चे आते हैं जिनके पास शिक्षा के और कोई विकल्प होते ही नहीं। इस तरह का दृष्टिकोण एक विशेष सामाजिक हैसियत वाले बच्चों और विशेषकर बालिकाओं के शैक्षणिक विमर्श के मुद्दों की उपेक्षा करने के साथ ही उन्हें हाशिए पर धकेलने का कार्य करता है। यह देखने में आता है कि परिवार की आर्थिक सामर्थ्य ठीक होने पर सबसे पहले बालकों को बेहतर समझे जाने वाले प्रायवेट स्कूलों में भेजने का प्रयास किया जाता है जबकि बालिकाओं को सरकारी विद्यालयों में ही भेजा जाता है।

डायट में अकादमिक अभिकर्मी के सेवा दायित्वों के अन्तर्गत जनपद के प्रारम्भिक सरकारी विद्यालय ही हैं। इस क्रम में विद्यालय अनुश्रवण एवं अकादमिक अनुसमर्थन हेतु इन विद्यालयों में जाना होता रहता है। मैं हमेशा से ही इसे बच्चों से बातचीत करने, उनके सामाजिक एवं शैक्षिक सन्दर्भ को समझने और इस परिप्रेक्ष्य में अध्यापकों से बातचीत करने के अवसर के रूप में देखता रहा हूँ।

बच्चों, अध्यापकों एवं विद्यालयों के परिप्रेक्ष्य एवं उनकी शैक्षणिक ज़रूरतों को समझने के मन्तव्य से जनपद बागेश्वर के दुर्गम क्षेत्र में स्थित राजकीय प्राथमिक विद्यालय, सिमकुना जाने का अवसर मिला। कुल 51 बच्चे इस विद्यालय में नामांकित हैं। उस दिन कुल 46 बच्चे विद्यालय में उपस्थित थे। बच्चों के साथ बातचीत से ज्ञात हुआ कि इस विद्यालय में आने वाले अधिकांश बच्चे विषम

सामाजिक परिस्थितियों एवं निर्धन परिवारों से ताल्लुक रखते हैं।

विद्यालय भ्रमण के दौरान पूरे दिन के कार्यक्रम के रूप में सबसे पहले विद्यालय की अध्यापिकाओं के साथ चर्चा और उसके बाद सभी कक्षाओं के बच्चों से एक-साथ बातचीत करने का इरादा था। मेरे मन में योजना थी कि पहले सभी बच्चों के साथ सामान्य बातचीत करके उनके परिप्रेक्ष्य को जानने-समझने की कोशिश की जाए। बाद में कक्षा 3, 4, 5 के बच्चों से बातचीत करके इनके शैक्षणिक स्तर और ज़रूरतों को जानने का प्रयास किया जाए। विद्यालय की अध्यापिकाओं से अनुमति लेकर इसी प्रकार की व्यवस्था बना ली गई।

बातचीत की शुरुआत में परिचय हुआ। बच्चों ने मेरे बारे में बहुत-से सवाल पूछे। ऐसा लग रहा था मानो बच्चे पहले मुझे जाँच-परख लेना चाहते हैं। मेरी शिक्षा, बचपन, स्कूल, गाँव, काम आदि के बारे में बहुत सारे सवाल किए। प्रायः लोग बच्चों से परिचय के क्रम में इस प्रकार के सवालों से बचना चाहते हैं। बातचीत के इस क्रम में धीरे-धीरे उनका परिचय होता जा रहा था, कुछ अलग से पूछने-जानने की कम ही ज़रूरत पड़ रही थी। कुछ बच्चे अभी भी संकोच के दायरे से बाहर आने में झिझक रहे थे। इनको बातचीत में कैसे शामिल किया जाए, मेरे मन में यही उथल-पुथल चल रही थी। इसी बीच एक मुखर बच्चे ने सवाल किया कि मुझे क्या पसन्द है और क्या नापसन्द। बस फिर क्या था, मुझे बातचीत को आगे बढ़ाने का सूत्र मिल गया। मैंने अपनी पसन्द-नापसन्द को ईमानदारी से बताया और अपनी बचपन की पसन्द-नापसन्द को भी साझा कर लिया। मेरा अनुमान था कि इस दिशा में बात को आगे बढ़ाने से बच्चों के सामाजिक सन्दर्भ को समझने में मदद मिल सकती है।

अतः तय किया गया कि प्रत्येक बच्चा अपनी पसन्द/नापसन्द को साझा करेगा। इस उपक्रम से उन बच्चों को बातचीत में शामिल करने में मदद मिली जो अभी तक संकोच में सिमटे हुए थे।

जब बातचीत आगे बढ़ी कि किसे क्या अच्छा लगता है, कब बुरा लगता है - इस क्रम में बहुत सारे संवेदनशील मुद्दे सामने आए। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण निम्न प्रकार से हैं-

1. एक बच्चे ने बताया कि जब अध्यापिका/अध्यापक उसे बुद्धू कहते हैं, उसे बहुत बुरा लगता है (कक्षाओं में बच्चों के नाम गढ़ना – लेबलिंग एवं विभेदीकरण)।
2. एक बालिका ने कहा कि उसे घर पर रोज़ झाड़ू लगानी पड़ती है। "मेरा भाई कभी यह काम नहीं करता। मुझे बहुत बुरा लगता है" (परिवार में लैंगिक विभेद के प्रति बालिका की संवेदनशीलता)।
3. बालिकाओं का कहना था कि लड़के

उन्हें कैरम नहीं खेलने देते। कहते हैं कि लड़कियों के खेल खेलो (विद्यालय में लैंगिक विभेद के प्रति बालिकाओं का स्पष्ट नज़रिया)।

4. एक बालिका ने बताया कि उसे बहुत बुरा लगता है जब उसे विद्यालय आने से मना किया जाता है और घर पर ही रोक दिया जाता है। इस बालिका के बारे में बच्चों ने बताया कि एक बार यह घर पर रोके जाने के बावजूद घरवालों को बिना बताए, चुपचाप मध्यावकाश के बाद विद्यालय आ गई थी (बालिकाओं की शिक्षा को लेकर अभिभावकों में लापरवाही एवं बच्चे में विद्यालय के प्रति स्वाभाविक लगाव)।

इस बातचीत के दौरान ऐसे कई मुद्दे निकलकर सामने आए जिनकी हम घर पर या फिर विद्यालय में जाने-अनजाने उपेक्षा करते रहते हैं। इस प्रारम्भिक बातचीत का मेरा उद्देश्य भी यही था। सो बच्चों के नज़रिए के बारे में मुझे कुछ महत्वपूर्ण सुराग मिल रहे थे। शिक्षणशास्त्रीय सन्दर्भों में इन मुद्दों की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। विद्यालय स्तर पर इस बारे में क्या किया जा सकता है, इस विषय में अध्यापकों से विचार-विमर्श किया गया।

बच्चों के संज्ञानात्मक परिप्रेक्ष्य को जानना-समझना ज़रूरी था सो बच्चों के साथ मिलकर तय किया गया कि बातचीत के अगले क्रम में पहले आधा घण्टा मैं बच्चों से सवाल करूँगा, बाद में एक घण्टा या उससे भी अधिक बच्चे मुझसे सवाल करेंगे और मुझे उनके सवालों के जवाब देने होंगे। मैंने यह पहले ही स्पष्ट कर दिया था

कि कुछ ऐसे प्रश्न हो सकते हैं जिनका उत्तर मुझे न आता हो, ठीक उसी प्रकार जैसे कुछ प्रश्नों के उत्तर बच्चों को नहीं आते हैं। शर्त यह थी कि सवालों के तुरन्त उत्तर देने का कोई दबाव नहीं होगा। सवालों के जवाब ढूँढ़ने के लिए छान-बीन, खोजबीन आगे भी जारी रह सकती है। बच्चों को यह ईमानदारी पसन्द आई। उनकी दृष्टि में अब बच्चों और मेरे बीच मामला बराबरी का था।

अपनी बारी में मैंने बच्चों से अधिकांशतः स्मृति आधारित प्रश्नों एवं कुछेक समझ आधारित प्रश्नों को आधार बनाकर बातचीत को आगे बढ़ाया। इस बार मुख्यतः कक्षा 3, 4 एवं 5 के बच्चों से बात करने का विचार था। विश्लेषण एवं तर्क आधारित प्रश्नों को मैं जानबूझकर प्रयोग में नहीं ला रहा था। कहीं-न-कहीं मेरी मान्यता थी कि विषम परिस्थितियों से आए और दुर्गम जगह पर स्थित विद्यालय में अध्ययनशील इन बच्चों से इतनी अपेक्षा करना न्यायसंगत नहीं होगा। अफसोस, कि मैं गलत साबित हुआ। बहुत बार हम बच्चों को कम करके आँकते हैं, यही भूल मैं भी कर रहा था।

मेरे हिस्से के सवाल-जवाब का आधा घण्टा पूरा हुआ। अब प्रश्न पूछने की बारी बच्चों की थी। बच्चों ने एक घण्टा नहीं बल्कि पूरे दो घण्टे बीस मिनट तक प्रश्न किए और वो भी पूरे 47 प्रश्न। यह प्रश्न किताबी थे या नहीं, इसका अनुमान आप बच्चों के प्रश्नों की बानगी से कर सकते हैं-

- दीपक (कक्षा-5) - अँग्रेज़ों ने हमें किस प्रकार गुलाम बनाया? पहले तो अँग्रेज़ व्यापार करने आए थे।
- प्रकाश (कक्षा-5) - नैनीताल की खोज किसने की? नैनीताल को बसाने में पी. बैरन की उत्सुकता क्यों रही होगी?
- दिव्या (कक्षा-5) - नील एवं अमेज़न, दोनों नदियों में से किस नदी को सबसे बड़ी नदी कहना चाहिए?
- विवेक (कक्षा-3) - भारत का सबसे बड़ा सम्मान कौन-सा है? यह किसी व्यक्ति को कब दिया जाता है?
- दीपक (कक्षा-5) - भारतीय झण्डे का प्रारूप किसने तैयार किया? इससे पूर्व झण्डा कैसा था? किसी देश के लिए झण्डा क्यों ज़रूरी है? किसी देश के लिए झण्डा किस प्रकार का होगा, इसे कौन तय करता है?
- अंकिता (कक्षा-3) - उत्तराखण्ड के राज्यपाल किस राज्य के रहने वाले हैं?
- अमित (कक्षा-4) - मछली की तो नाक नहीं होती, तो फिर वह साँस कैसे लेती है?
- राजेश (कक्षा-4) - जलियांवाला बाग काण्ड का हमारे देश की आज़ादी से क्या सम्बन्ध है?
- दीपक (कक्षा-5) - महात्मा गाँधी तो अहिंसावादी थे, फिर उन्होंने करो या मरो का नारा क्यों दिया?

• भावना (कक्षा-4) - पेड़-पौधे हमारी तरह साँस लेते हैं। फिर इनको काटना एक तरह से प्राणी को नष्ट करना नहीं है?

ये वो प्रश्न भी हैं जिन्हें मैं हमेशा याद रखना चाहूँगा। बच्चों के प्रश्न एकदम से उनकी पाठ्यपुस्तकों से भले ही न हों परन्तु इन प्रश्नों को बेतुके प्रश्नों की श्रेणी में किसी भी हिसाब से नहीं रखा जा सकता। बच्चों के ये प्रश्न स्मृति एवं समझ के स्तर से उच्च स्तर की किसी श्रेणी में आते हैं। इससे एक अन्य महत्वपूर्ण समझ मज़बूत होती है कि बच्चे किसी भी तथ्य/ज्ञान की सतही समझ से सन्तुष्ट न होकर उसमें गहरे उतरना चाहते हैं।

बच्चों के द्वारा किए गए एक के बाद दूसरे, और फिर मेरे उत्तर की स्पष्टता के लिए किए गए प्रश्नों ने मुझे दम लेने का भी मौका नहीं दिया। उनको उत्तर एवं स्पष्टीकरण देने में मुझे बहुत आनन्द आया। सौभाग्यवश इतिहास एवं भूगोल मेरी रुचि का विषय होने के कारण मैं बच्चों को कुछ हद तक सन्तुष्ट कर सका। यदि प्रश्न मेरे रुचि के क्षेत्र से नहीं भी होते या मेरी अवधारणात्मक समझ के दायरे से बाहर भी होते तो यह मेरी पेशेवर ज़िम्मेदारी होती कि मैं पुनः पूरी तैयारी के साथ बाद की मुलाकातों में बच्चों के बीच जाकर संवाद करूँ। वैसे भी हमारे बीच मित्रता का इतना मज़बूत पुल बन गया था कि मैं किसी प्रश्न को तत्काल सम्बोधित न भी कर पाता

तो बच्चे यह मानने को तैयार थे कि हमें हरेक सवाल का जवाब आना ज़रूरी नहीं है और इन प्रश्नों के बारे में आगे खोजबीन की जा सकती है। यह बात तो हमारी बातचीत के प्रारम्भ में ही किए गए समझौते की शर्त जो थी। मूलभूत बात यह थी कि बच्चों को प्रश्न करने के अवसर दिए जाएँ।

लगभग ढाई घण्टे की हमारी बातचीत में बच्चे प्रश्न कर रहे थे, प्रति-प्रश्न कर रहे थे और मैं उत्तर देने का प्रयास कर रहा था। यह तरीका बच्चों को बहुत पसन्द आया।

बच्चों से बातचीत, उनके प्रश्नों की गहराई, उनकी संलग्नता, प्रति-प्रश्नों से अपनी समझ को स्पष्ट करने का तरीका आदि से यह अनुमान लगाना कठिन नहीं है कि बच्चे सीख रहे थे और सीखना चाह रहे थे।

बच्चों के सवालों, प्रति-सवालों से एक बात तो बहुत साफ है कि बच्चे ज्ञान-सृजन की प्रक्रिया के लिए हमेशा तत्पर रहते हैं। अध्यापक के रूप में

हमें बस इतना करना है कि उनके सवालों को सम्बोधित करें। इसी क्रम में बच्चे के विषयगत परिप्रेक्ष्य को समझें, उनके अधिगम स्तर (स्मृति, ज्ञान, समझ, विश्लेषण एवं मूल्यांकन स्तर) का पता लगाएँ। आकलन एवं मूल्यांकन करते चलें। उसी के अनुरूप अपनी शिक्षण प्रक्रिया का नियोजन एवं समंजन करें। यह सब साथ-साथ चलता रहता है।

इन सभी मुद्दों पर विद्यालय की अध्यापिकाओं से विचार-विमर्श करके मैं सन्तोषभाव लेकर लौटा। एक विचार की स्पष्टता के साथ लौटा कि अध्यापक ही हमेशा सवाल क्यों करें? बच्चे सवाल क्यों न करें? मूल बात है कि सवाल उठाए जाएँ। बच्चों से सवालों के तुरन्त उत्तर प्राप्त करने की हमारी अपेक्षा बच्चों को रटने की ओर धकेलती है। इसके विपरीत सवालों के हल मिल-जुलकर खोजने की लोकतांत्रिक प्रक्रिया बच्चों में सीखने के प्रति स्वाभाविक प्रेम विकसित करती है, यह सबसे महत्वपूर्ण बात है। बच्चों के द्वारा किए जाने वाले सवालों के गम्भीर शैक्षणिक निहितार्थ हो सकते हैं। बच्चों के सीखने एवं अध्यापकों द्वारा सिखाने की प्रक्रिया के महत्वपूर्ण सुराग इसमें छिपे हो सकते हैं। महान वैज्ञानिक अल्बर्ट आंइस्टीन ने एक बार कहा था, "महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रश्न पूछना जारी रहना चाहिए।" बच्चों से बातचीत से रोमांचित हूँ कि बच्चे तो हमेशा जानने, समझने एवं सीखने के लिए तत्पर रहते हैं बशर्ते हम बच्चों को सवाल करने के अवसर तो दें।

केवलानन्द काण्डपाल: ज़िला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, बागेश्वर, उत्तराखण्ड में कार्यरत।
सभी चित्र व सज्जा: कनक शशि: स्वतंत्र कलाकार के रूप में पिछले एक दशक से बच्चों की किताबों के लिए चित्रांकन कर रही हैं। एकलव्य, भोपाल के डिज़ाइन समूह के साथ कार्यरत।

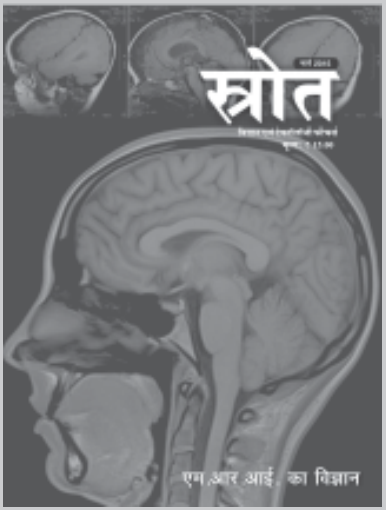

स्रोत

विज्ञान एवं टेक्नॉलॉजी फीचर्स

मासिक पत्रिका

स्रोत के ग्राहक बनें

एक प्रति **15** *रुपए*
व्यक्तिगत वार्षिक सदस्यता **150** *रुपए*
संस्थागत वार्षिक सदस्यता **300** *रुपए*

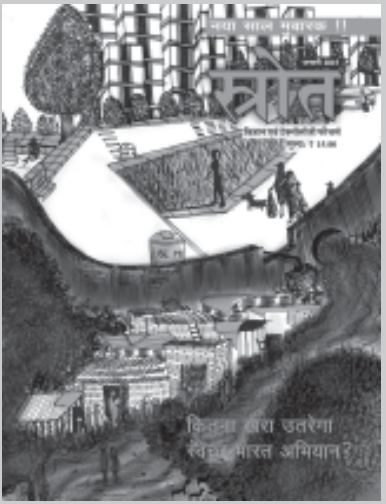

ज्ञान आधारित समाज के निर्माण का एक सशक्त संसाधन है 'स्रोत' पत्रिका

सदस्यता शुल्क एकलव्य, भोपाल के नाम ड्राफ्ट या मनीऑर्डर से इस पते पर भेजें

ई-10, शंकर नगर, बी.डी.ए. कॉलोनी, शिवाजी नगर, भोपाल (म.प्र.) 462 016

फोन : (0755) 2550976, 2671017

ई-मेल : srotefeatures@gmail.com

Order your copies at: pitara@eklavya.in

भाषा शिक्षणः समग्र-भाषा पद्धति

सौरभ रॉय

लेख के पहले हिस्से में हमने भाषा-शिक्षण में समग्र-भाषा दृष्टिकोण को अपनाने की ज़रूरतों, इसके पीछे के तर्कों एवं इसके दार्शनिक व सैद्धान्तिक पहलुओं को जाना। लेख के इस दूसरे हिस्से में हम समग्र-भाषा के सिद्धान्तों, परिभाषाओं और प्रक्रियाओं को कक्षा में प्रयोग होते हुए और अभिभावकों को भी भागीदार बनाकर भाषा को व्यावहारिक जीवन में उतरते हुए देखेंगे।

समग्र-भाषा की कक्षा का गहराई से किया गया अवलोकन उसकी कई परिभाषाओं को जानने से ज़्यादा महत्वपूर्ण है। ऐसा इसलिए क्योंकि कक्षा-कक्ष में ही समग्र-भाषा के सिद्धान्तों, परिभाषाओं और प्रक्रियाओं को उतरते हुए देखा जा सकता है। अगर हम समग्र-भाषा पद्धति की कुछ कक्षाओं का अवलोकन करें तो यह समझ पाएँगे कि इस पद्धति की कोई भी दो कक्षाएँ एक जैसी नहीं होती हैं। इसके बावजूद कुछ निश्चित रणनीतियाँ प्रत्येक कक्षा में शामिल होती हैं जिन्हें तय करने में उम्र, कक्षा या बच्चों के स्तर से कोई फर्क नहीं पड़ता। ये रणनीतियाँ समग्र-भाषा शिक्षण की कक्षा के अनुरूप शिक्षक की भाषा और सीखने की धारणाओं एवं उसके कहानी, बच्चे, बच्चों का समुदाय, बच्चों के विद्यालय के बाहर के जीवन आदि के प्रति आदर-सम्मान एवं चिन्तन को भी दर्शाती हैं।

कहानी-कविता सुनना और पढ़ना

समग्र-भाषा पद्धति पर कार्य करने वाले शिक्षक बच्चों को लगभग प्रतिदिन कहानी-कविता सुनाते हैं या पढ़ने के लिए देते हैं। यहाँ कहानी-कविता में गाने, चुटकुले, नाटक, पहेलियाँ, किसी घटना अथवा जगह के बारे में जानकारी आदि सभी शामिल हैं।

इस तरह शिक्षक रोज़ कहानी सुनाकर या पढ़ने के मौके उपलब्ध कराकर कोशिश करते हैं कि पाठ्यक्रम के केन्द्र में बच्चों के साथ-साथ कहानियाँ भी हों। समग्र-भाषा की कक्षा में कहानी-कविता सुनने हेतु समर्पित समय सीखने-सिखाने के लिए आधार

का काम करता है। और इस प्रक्रिया में अर्थ-निर्माण भी साथ-साथ ही होता है।

बच्चों की स्वयं एवं आसपास के बारे में समझ अत्यन्त महत्वपूर्ण है। कहानी-कविताओं को सुनाकर और पढ़कर बच्चे स्वयं, अपने परिवेश और आसपास के बारे में बेहतर एवं स्पष्ट समझ बना पाते हैं। यदि हम चाहते हैं कि बच्चे अच्छे पाठक बनें तो यह अत्यन्त आवश्यक है कि उनके आसपास अलग-अलग तरह की मुद्रित कहानियों, कविताओं, चुटकुलों, पहेलियों, घटना एवं अनुभव आदि का भण्डार हो। यह वातावरण बच्चों को पढ़ना-लिखना सीखाने में आधारभूत रूप से सहायक होता है।

कहानी की विषयवस्तु और स्वरूप बच्चों के भाषा और साहित्य के अनुभवों को विस्तार देने के साथ-साथ पढ़ना और लिखना सीखने के लिए आधार भी देते हैं। कहानियों को सुनकर बच्चे उसमें समाहित व्याकरण (वाक्य रचना आदि) का भी अनुमान लगा लेते हैं। इस अनुमान लगाने की प्रक्रिया से बच्चों को अर्थ बनाने में मदद मिलती है। कहानियों पर चर्चा बच्चों में एक साझी समझ बनाने में सहायता करती है। साथ ही यह बच्चों को कहानी को आगे बढ़ाने एवं उसकी विषय-वस्तु या चरित्र आदि को दूसरी कहानियों के साथ जोड़कर देखने का अवसर भी प्रदान करती है। कहानी सुनने वाले भी अन्य साहित्य जैसे नाटक, संगीत आदि को सुनकर या उसी लेखक की अन्य काहनियाँ पढ़कर चर्चित कहानी पर अपनी बात रख सकते हैं। वे

कहानी को आगे बढ़ाकर उसमें कुछ घटना जोड़कर भी अपनी बात कह सकते हैं।

शिक्षक जब पाठ्यक्रम की स्वाभाविक प्रक्रिया के रूप में कहानी सुनाते हैं तो बच्चों के ऊपर किसी तरह का दबाव नहीं होता है। बच्चे अपनी पृष्ठभूमि के आधार पर कहानियों के अर्थ को ग्रहण करते हैं, साथ ही अलग-अलग संस्कृतियों के बारे में समझ भी बनाते हैं। समग्र-भाषा की कक्षा में प्रतिदिन बच्चों को स्वयं कहानी पढ़ने के मौके दिए जाते हैं। इन कक्षाओं में इसके साथ-साथ पढ़ने की अन्य सामग्री भी उपलब्ध होती है। इस प्रकार कहानियों एवं कई अन्य विषय-वस्तु को बच्चे स्वयं पढ़ते हैं और बेहतर पाठक बनने की दिशा में अग्रसर होते हैं।

लेखन

समग्र भाषा की कक्षा में लेखन के अन्तर्गत नए विचारों को बुनने, उन्हें आवश्यकतानुसार बदलने अथवा सुधारने, और अन्य साथियों के समक्ष प्रस्तुत अथवा साझा करने की प्रक्रिया समाहित होती है। इस प्रक्रिया में बच्चे कहानी-कविता के माध्यम से अपने लेखन का प्रस्तुतिकरण करते हैं।

बच्चों की कक्षा-कक्ष में कहानी, कविता, घटना के वर्णन, पत्र, अखबार के समाचार, रिपोर्ट, चुटकुले, पहेलियाँ आदि के साथ के अनुभव उन्हें लेखन की अलग-अलग शैलियों से परिचित कराते हैं। साथ ही ये बच्चों को अलग-अलग रूपों में लिखने के लिए प्रेरित भी करते हैं। उदाहरण के लिए बच्चों को कविता सुनने, पढ़ने आदि के अनुभव उनको अपनी ज़िन्दगी के अनुभवों को कविताओं के रूप में लिखने के लिए प्रेरित करते हैं। एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त के रूप में इन कक्षाओं में लिखना सीखने के लिए लिखने के अर्थपूर्ण मौके दिए जाने का चलन होता है। इस प्रक्रिया में बच्चे दृढ़निश्चित होकर विश्वास के साथ लिखना सीखते हैं।

व्यक्तिगत और सामाजिक सम्बन्ध

समग्र-भाषा का पाठ्यक्रम पढ़ने और लिखने के दौरान निकलने वाले अर्थों को व्यक्तिगत अनुभवों के साथ जोड़कर देखने के लिए व्यक्ति-विशेष को प्रोत्साहित करता है। बच्चों के पास लगातार इस बात के अवसर होते हैं कि वे अपनी स्वयं की पसन्द की सामग्री को अकेले (यदि वे ऐसा करना चाहते हैं तो) बैठकर पढ़ें या उस पर लिखें। इसके साथ ही समग्र-भाषा पर काम करने वाले सभी शिक्षक इस बात का ध्यान रखते हैं कि यह एक अकेले बच्चे की अकेली कक्षा न हो। इस बात के पीछे शिक्षकों की यह समझ है कि भाषा को व्यक्तिगत एवं सामाजिक परिप्रेक्ष्य में एक-दूसरे के साथ सहयोग करके, बात करके एवं अन्तःक्रिया करके सीखा जा सकता है। इनका मत है कि भाषा के कई उपयोग होते हैं और समग्र-भाषा-शिक्षण में इन सारे उपयोगों को शामिल किया जाता है।

दूसरों की बात समझना, पढ़ना, अपनी बात कहना, लिखना, सोचना, सामाजिक सम्बन्ध बनाना, निर्देश देना व लेना आदि सबको साथ लेकर भाषा पर काम करना इन कक्षाओं के लक्षण हैं। अतः समग्र-भाषा पद्धति पर काम करने वाले विद्यालयों में बच्चे एक-दूसरे के साथ समाजीकरण की प्रक्रिया में उसी तरह घुलते-मिलते हैं जैसे कि वे कक्षा के बाहर एक-दूसरे से घुलमिल रहे होते हैं। बच्चे एक-दूसरे के साथ इन बिन्दुओं पर बात करते हैं कि वे क्या पढ़ रहे हैं, लिख रहे हैं, किन समस्याओं का सामना कर रहे हैं, किन समस्याओं का समाधान कर पा रहे हैं या किनका नहीं कर पा रहे हैं और कौन-कौन से प्रयोग कर रहे हैं। इस प्रकार सभी बच्चों को ध्यान में रखते हुए कक्षा-कक्ष के सन्दर्भ में प्राकृतिक एवं उपयुक्त परिस्थितियों में सीखने-सिखाने की प्रक्रिया होती है। समग्र-भाषा की कक्षा में काम करने वाले शिक्षक उन क्षेत्रों में बच्चों के लिए कुछ नहीं करते हैं जिन क्षेत्रों में बच्चे स्वयं कार्य कर सकते हैं। बच्चों को जब भी मदद चाहिए तो यह मदद उनके साथियों के रुप में उनके पास उपलब्ध रहती है। यहाँ बच्चे एक-दूसरे से प्रश्न करते हैं और प्रश्नों के उत्तरों को बातचीत के द्वारा गहराई से समझने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार समग्र-भाषा की कक्षा में सहयोग की भावना को प्रोत्साहित किया जाता है। समग्र-भाषा पद्धति पर काम करने वाले शिक्षक लगातार अपनी कक्षा शिक्षण प्रक्रिया में इस बात के मौके ढूँढ़ते रहते हैं कि कैसे बच्चों के बीच एक-दूसरे की मदद करने की भावना बढ़े। इसके लिए शिक्षक साथी कई बार बच्चों का जोड़ा बनाकर, समूह में कार्य देकर अथवा शिक्षक (स्रोत व्यक्ति) की भूमिका पर बातचीत कर ऐसे मौके की सम्भावनाओं को बढ़ाने की कोशिश करते हैं। कुछ जगहों पर हमने यह भी देखा है कि बच्चे पढ़ने-लिखने के दौरान न केवल कहानियों की विषयवस्तु के बारे में बात करते हैं वरन् वे इसकी प्रक्रियाओं के बारे में भी बात करते हैं।

इस दौरान कई शिक्षकों द्वारा बहुभाषिता को कक्षा में चर्चा को आगे बढ़ाने हेतु एक संसाधन के रूप में उपयोग करते हुए भी हमने देखा। जबकि इसी बहुभाषिता को पारम्परिक ध्वनि-वर्ण पद्धति एप्रोच में एक बाधा

बना दिया जाता था। एक विद्यालय में तो हमने यह भी देखा कि शिक्षक और कुछ बच्चों के मध्य इस बात की सचेत जागरूकता है कि पढ़ने और लिखने के दौरान उनके दिमाग में क्या चल रहा था।

योजना बनाने की योजना

समग्र-भाषा पर कार्य करने वाले शिक्षकों के समूह की एक मान्यता यह है कि दुनिया में रहने के लिए आवश्यक ज़रूरतें, विद्यालय के बाहर का जीवन और वहाँ प्राप्त ज्ञान एवं अनुभव सीखने के लिए तात्कालिक रुप से आवश्यक प्रेरणा देते हैं। इन कारणों से समग्र-भाषा की कक्षा में पढ़ाने वाले शिक्षक कक्षा-कक्ष में पढ़ने-पढ़ाने की विषयवस्तु (क्या पढ़ाएँगे) और तरीके (कैसे पढ़ाएँगे) को बच्चों के साथ मिलकर उनकी रज़ामन्दी से ही अन्तिम रूप देते हैं। इसका मतलब यह कतई नहीं है कि समग्र-भाषा पर काम करने वाले इन शिक्षकों के पास कक्षा में काम करने को लेकर कोई योजना नहीं होती है। इसके विपरीत इन शिक्षकों का विद्यालय/कक्षा शुरू होने से पहले का काफी समय 'इस योजना की योजना (विषयवस्तु/प्रसंग, पाठ, इकाई आदि को खोजने)' बनाने में जाता है। शिक्षक एक ही विषयवस्तु पर विभिन्न प्रकर के कारणों को ध्यान में रखते हुए विचार करते हैं, पूर्व के बच्चों ने इस विषयवस्तु को मज़े के साथ पढ़ा था, यह सामग्री आसानी से उपलब्ध है, शिक्षक की स्वयं इस विषय में रुचि है, माता-पिता इस विषय को पढ़ने के लिए बच्चों को प्रोत्साहित करते हैं, यह विषय परीक्षा के हिसाब से महत्वपूर्ण है, पाठ्यक्रम में यह विषय प्रमुखता से लिया गया है आदि। इनमें से जो भी कारण रहे हों परन्तु समग्र-भाषा पर काम करने वाले शिक्षक विषयों पर काम करने से पहले उन पर बच्चों के साथ बात अवश्य कर लेते हैं। कुछ जगहों पर तो हमने यह भी देखा कि बाकायदा बच्चों की रज़ामन्दी ली जाती है। कई विद्यालयों में तो इस तरह के भी उदाहरण मिले हैं जहाँ शिक्षकों के साथ बच्चों ने अपनी रुचियों एवं जीवन की घटनाओं को साझा करना शुरू किया और शिक्षकों ने इसके इर्द-गिर्द कक्षा-कक्ष की विषयवस्तु को बुनकर पाठ्यक्रम एवं विषयवस्तु के बारे में छात्रों को बताया।

***

समग्र-भाषा के लिए सहायक सिद्धान्त

समग्र-भाषा पर कार्य करना इसकी एक परिभाषा गढ़ने या इसमें की जा रही मुख्य गतिविधियों की सूची बनाने की तुलना में कहीं अधिक है। यह शिक्षक का सीखने-सिखाने के बारे में एक दृष्टिकोण है जो उसके कक्षा-कक्ष शिक्षण, सीखना कैसे होता है एवं बच्चों की समझ के नज़रिए से बनता है। समग्र-भाषा की कक्षा में पढ़ाने वाले शिक्षक बार-बार अपने इन विश्वासों को कक्षा-कक्ष की शिक्षण

प्रक्रिया के दौरान ध्यान में रखते हैं। इनमें से कुछ मुख्य सिद्धान्त जिनका समग्र-भाषा पर काम करने वाले शिक्षक ज़िक्र करते हैं निम्न हैं:

बच्चों के अनुभवों का उपयोग

समग्र भाषा पर काम कर रहे साथी बच्चों के पिछले अनुभवों पर बातचीत करते हैं। बातचीत की प्रक्रिया में यह सुनिश्चित करते हैं कि सभी बच्चे सक्रिय रूप से इसमें भाग लें। किन विषयों पर बातचीत करनी है यह चुनने की आज़ादी भी कुछ शिक्षक बच्चों को देते हैं। इस प्रक्रिया में शिक्षक बच्चों की रुचि, किन विषयों पर उन्हें बातचीत पसन्द है, उनकी अवलोकन क्षमता, विषय के बारे में जानकारी आदि पर समझ बना पाते हैं। साथ ही वे बच्चों के साथ बेहतर सम्बन्ध भी बना पाते हैं। बातचीत की यह प्रक्रिया जैसे-जैसे पढ़ना-लिखना सीखने सिखाने के दौर की ओर बढ़ती है, बच्चों को पढ़ना-लिखना सीखना मज़ेदार लगने लगता है। उन्हें यह लगता है कि वे जो कुछ बोल रहे हैं उसे लिखा भी जा सकता है और लिखी हुई चीज़ को पढ़ा भी जा सकता है। इस तरह से वे पढ़ना-लिखना सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदारी करते हैं और इसके लिए विषय-वस्तु बनाने में शिक्षक की मदद करते हैं।

चुनने की आज़ादी

समग्र-भाषा पर कार्य कर रहे शिक्षकों के समूह में हमने यह देखा है कि बच्चों को पढ़ने की शुरुआत में ही शिक्षक उन्हें चुनने की आज़ादी देते हैं। सीखने के बिन्दुओं को बच्चे किस विषय-वस्तु, कहानी-कविता की चयनित किताबों से पढ़ेंगे यह चुनने की आज़ादी कुछ शिक्षक अपने बच्चों को देते हैं। बच्चों से उनके चुनाव के बारे में जानने के लिए वे बच्चों के बारे में, सीखने की प्रक्रियाओं के बारे में, भाषा एवं विषय के बारे में अपनी जानकारी के आधार पर योजना बनाते हैं। बच्चे शिक्षकों के इन आग्रहों को बड़े मज़े के साथ स्वीकार करते हैं और स्वयं चुनकर किताबों को पढ़ने की कोशिश करते हैं। इसमें मज़े की बात यह भी है कि शिक्षक स्वयं भी अपने ही आमंत्रण को स्वीकार कर खुद भी पढ़ने-लिखने की प्रक्रिया में बच्चों के साथ शामिल होते हैं और किताबें पढ़ते हैं या कहानियाँ लिखते हैं। इस प्रकार समग्र-भाषा पर काम करने वाले शिक्षक बेहतर विकल्प और निमंत्रण देकर बच्चों की रचनात्मकता को प्रोत्सहित करते हैं।

छात्रों की ज़िम्मेदारी

छात्र के स्वयं सीखने की ज़िम्मेदारी उसकी खुद की होती है। छात्रों के सशक्तिकरण के लिए समग्र-भाषा पर काम करने वाले शिक्षक पूरी किताब एवं विषयवस्तु को पढ़ने और लिखने के लिए न चुनकर, छात्रों को वास्तविक रूप से पढ़ने और लिखने के मौके एवं फीडबैक देकर उनकी मदद करते हैं। फीडबैक देते समय शिक्षक सही समय का इन्तज़ार करते हैं और यह कोशिश

करते हैं कि यह फीडबैक उनके पढ़ने और लिखने की प्रक्रिया में बाधित न बने वरन् उनको आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करे। छात्र पाठ्य-पुस्तक पूरा करने के पीछे न पड़कर, तय किए कार्यों को आपस में समूह की मदद से करने की कोशिश करते हैं। शिक्षक इस प्रक्रिया में यह ध्यान रखते हैं कि उन चीज़ों को न करें जो छात्र स्वयं कर सकते हैं।

इस समूह के शिक्षक छात्रों को काम देते समय यह भी ध्यान रखते हैं कि उन्हें यह काम असम्भव न लगे, परन्तु साथ ही यह ध्यान रखा जाता है कि काम करने में छात्रों को चुनौती अवश्य मिले। इस प्रक्रिया में छात्र पैटर्न, समानता, सम्बन्ध जोड़ने जैसी दिमागी कसरतों का उपयोग करते हुए कई बार उन दक्षताओं एवं उद्देश्यों को भी पार कर जाते हैं जिनकी अपेक्षा शिक्षक ने की थी।

गलतियों को स्वीकार करना

भाषा के अन्दर भाषाई स्वरूप की सम्पूर्णता जैसी कोई बात नहीं होती है। यदि शिक्षक और बच्चे किसी और के द्वारा भाषा के बनाए गए मानकों के लिए बाध्य नहीं हों तो वे भाषा के विकास की प्रक्रिया में भागीदार बन सकते हैं। हम जैसे ही भाषा में सम्पूर्णता (मानकीकरण) के ख्याल से अपने को दूर करते हैं, साक्षरता के 'यह ही एकदम सही है' के मॉडल से भी अपने को दूर कर लेते हैं। इससे वे सभी विचार जो भाषा में एक तरह की विशेषज्ञता (मानकीकरण) की माँग करते हैं, 'प्राकृतिक परिवेश में भाषा का उपयोग करते हुए भाषा सीखने' की सोच के साथ परिवर्तित होते हुए प्रतीत होते हैं। बच्चे भाषा का सही उपयोग करने के साथ-साथ भाषा का 'गलत' उपयोग करके (मानकीकृत भाषा से भिन्न) भाषा सीख सकते हैं। कई बार यह भी होता है कि भाषा का 'गलत' उपयोग करके (जैसा कि कई लोगों की मान्यता है कि भाषा का सही उपयोग तो मानकीकृत रूप में ही है) भाषा सीखना बेहतर होता है।

जब भाषा को सुनने, बोलने, पढ़ने और लिखने वाले भाषा के विकास की प्रक्रिया को आगे बढ़ाने की ज़िम्मेदारी (जोखिम) लेते हैं तो सन्दर्भों के विभिन्न अर्थ निकालना इसका एक प्रमुख हिस्सा

होता है। इसमें शिक्षक बच्चों को मानकीकृत भाषा पर न ले जाकर अपने विभिन्न अर्थों को साझा करने के अवसर देते हैं।

समग्र-भाषा की कक्षा में कार्य करने वाले शिक्षकों से बातचीत करने पर यह बात समझ में आती है कि उनके लिए पढ़ने-लिखने की प्रक्रिया को करने के दौरान बच्चों के व्यक्तिगत अनुभव, तर्क और उनके लिखित रफ कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण होते हैं। इस समूह के सभी शिक्षक साथी यह मानते हैं कि भाषा सीखने-सिखाने की प्रक्रिया का एक स्वस्थ्य वातावरण तभी बनता है जब शिक्षक बच्चों को अपनी गलतियों से सीखने के मौके दें और इस प्रक्रिया में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करें।

अर्थ पर ज़ोर

हम लोगों ने यह देखा है कि इस समूह के शिक्षकों की यह मान्यता है कि बच्चे जब अर्थ बता रहे हों (लिखित या मौखिक किसी भी माध्यम में) तो सतही स्तर के सुधार के लिए रोकना उनके संज्ञानात्मक और भाषाई कौशलों के विकास में बाधा पहुँचाता है। शिक्षक साथियों के साथ बातचीत के दौरान उन्होंने कहा कि जब हम बच्चों का ध्यान भाषा की अर्थपूर्ण प्रक्रिया से दूर व्याकरण की शुद्धता की ओर ले जाते हैं तो सीखने की प्रक्रिया बेसुरी हो जाती है। इस कारण से (भाषा का उपयोग करने वाले) कई बच्चे भाषा सीखने की प्रक्रिया की प्राकृतिक गति, प्रवाह और प्रेरणा कभी हासिल ही नहीं कर पाते हैं। अर्थ सही हो इस पर काम कैसे करें, के प्रश्न के उत्तर में शिक्षकों ने कहा कि भाषा की विभिन्न रीतियों और मानक रूपों की ओर ध्यान आकर्षित करना हमारी कक्षा का एक हिस्सा होता है लेकिन यह शुरुआती रूप से सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखना और इस दौरान अर्थ-निर्माण सीखने की प्रक्रिया के दौरान ही हो - यह भ्रम हम नहीं पालते हैं।

भाषाई कला का एकीकरण

इस पर कार्य करने वाले शिक्षकों की कक्षा में भाषाई हुनर सम्पूर्णता के साथ एकीकृत रूप में ठीक उसी तरह समाहित होते हैं जैसे कि वे कक्षा के बाहर पाए जाते हैं। समग्र-भाषा की

कक्षा में सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखना जैसी भाषाई कलाओं को बच्चे किसी एक दिए गए क्रम में नहीं सीखते वरन् एक-दूसरे के साथ जोड़कर ही सीखते हैं, साथ ही इन भाषाई कलाओं के अन्दर बच्चे विभिन्न रीतियों जैसे मानक व्याकरण, उच्चारण, हस्तलेखन और अभिव्यक्ति को भी प्राकृतिक वातावरण में एक-दूसरे के साथ जोड़ते हुए सीखते जाते हैं।

विषय वस्तु के क्षेत्र

पढ़ने-पढ़ाने की प्रक्रिया में विषय वस्तु के क्षेत्र अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इस पद्धति के द्वारा कार्य करने वाले शिक्षकों की कक्षाओं में बच्चे विज्ञान, कला, संगीत, गणित, खेल, पर्यावरण अध्ययन, खाना पकाना, सिलाई आदि ज़िन्दगी के महत्वपूर्ण पक्षों के बारे में सुनने, बोलने, पढ़ने और लिखने की प्रक्रिया में शामिल रहते हैं। शिक्षक इस बात को समझते हैं कि यह प्रक्रिया भाषा सीखने के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस प्रक्रिया पर यकीन करने वाले सभी शिक्षक यह भी मानते हैं कि विषय-वस्तु से सम्बन्धित बुनियादी अवधारणाओं की विवेचना, ज्ञान के किसी निश्चित क्षेत्र के अन्तर्गत शामिल शब्द-विशेष की व्याख्या के पहले या साथ-साथ होती है। अपनी इस समझ के कारण शिक्षक साथी विषय वस्तु के विभिन्न क्षेत्रों के महत्व को समझते हुए मौखिक एवं लिखित भाषा सीखने-सिखाने के साथ-साथ इस बात को ध्यान में रखते हुए आगे बढ़ते हैं।

कक्षा का वातावरण

कक्षा अपने आप में सीखने को बढ़ावा देने की एक रणनीति है। इस समूह के शिक्षक कक्षा में बच्चों के सीखने की प्रक्रिया को सुगम तरीके से उत्पादकता को बढ़ाते हुए करने की कोशिश करते हैं। कक्षा के केवल वातावरण से नहीं वरन् उसके वास्तविक स्वरूप (दीवारों, बैठक व्यवस्था आदि) से भी बच्चों को यह इंगित करने की कोशिश की जाती है कि यह उनकी अपनी कक्षा है जिसकी देखभाल उन्हें ही करनी है। इस समूह के शिक्षक कक्षा के अन्दर कार्य करने के कुछ नियम भी मिलजुल कर बनाते हैं। इससे कक्षा में रहने वाले बच्चों एवं शिक्षकों को बेहतर तरीके से छोटे समूहों में या व्यक्तिगत रूप से कार्य कर पाने में आसानी होती है। शिक्षक यह भी ध्यान रखते हैं कि बच्चे इस प्रक्रिया में आवश्यकतानुसार अपने अभिभावकों से विद्यालय समय के दौरान मिल सकें।

अभिभावकों की भागीदारी

बच्चों के विचारों एवं भाषा की जड़ उनके घर या समुदाय में होती है। समग्र-भाषा में काम करने वाले शिक्षक इस बिन्दु को अपने कार्य का हिस्सा बनाते हैं। शिक्षक कार्य तो बच्चों के साथ ही करते हैं परन्तु इसके साथ-साथ वे अभिभावकों के साथ भी कार्य करते हैं। इस बात को समझना आवश्यक है कि समग्र-भाषा

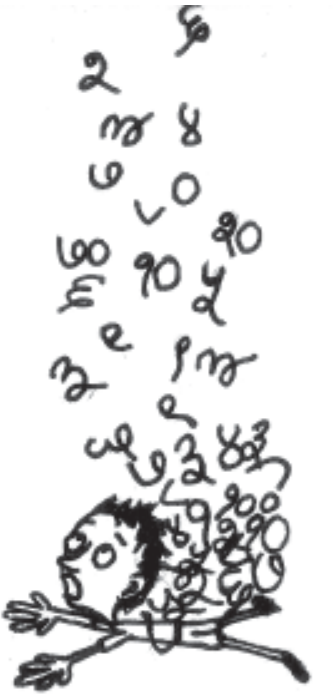

के शिक्षक इस बात को भी मानते हैं कि बच्चों की समस्याओं का मूल उनके घरों में ही नहीं है। इस कारण से वे भाषा न सीखने के दोषों को बच्चों के अभिभावकों पर नहीं मढ़ते हैं। इसकी जगह सकारात्मक रूप से कार्य करते हुए शिक्षक बच्चों के अभिभावकों को समग्र-भाषा पर कार्य करने हेतु आमंत्रित करते हैं। इस प्रक्रिया में शिक्षक अभिभावकों को बच्चों को कहानी सुनाने, बातें करने आदि गतिविधियों में जुड़ने के लिए कहते हैं।

आकलन

समग्र-भाषा के शिक्षक यह यकीन करते हैं कि आकलन का प्राथमिक उद्देश्य बच्चों को स्वयं के सीखने के बारे में जानकारी देना होता है। इसको करने के बाद शिक्षकों, पाठ्यक्रम बनाने वालों, अभिभावकों और समुदाय को जानकारी देना भी आकलन का उद्देश्य है। जैसे ही हम इसके उलट प्राथमिक उद्देश्यों को समुदाय अथवा अभिभावक को सूचित करना बना देते हैं, बच्चे और अध्यापक छात्रों के प्रयासों को नम्बरों या ग्रेड (दोनों में से कोई एक) में बताने में खोकर रह जाते हैं। जैसे-जैसे नम्बर महत्वपूर्ण होता जाता है बच्चे खोते (अदृश्य हो) जाते हैं। इस समूह के शिक्षक बड़ी सतत्ता के साथ बच्चों की योग्यता और सीखने के सबूतों को स्वीकार करते हैं। इस प्रक्रिया में शिक्षक कई बार बच्चों का स्वयं अवलोकन करते हैं और उन्हें समूह में साथियों के साथ अवलोकन करने और स्व-आकलन करने के मौके भी देते हैं। इस प्रक्रिया को मानने वाले शिक्षक परम्परागत परीक्षण (टेस्टिंग) द्वारा बच्चों की उपलब्धियों की संकीर्ण विचारधारा को तोड़ते हुए प्रतीत होते हैं। साथ ही शिक्षकों को यह भी पता होता है कि इस तरह के प्रयासों से पाठ्य सहगामी क्षेत्रों में बहुत आगे नहीं जा सकते हैं।

इस समूह के शिक्षकों को यह यकीन होने लगा है कि आलोचकों के लिए समग्र-भाषा के आकलन से उपलब्ध

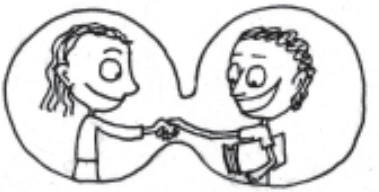

जानकारियों को समझना और उसकी सराहना करना अत्यन्त कठिन काम है। फिर भी इस पर काम करने वाले शिक्षकों का अनुरोध व अनुशंसा इस बात के लिए कभी भी बन्द नहीं होती कि बच्चों के लिखित कार्यों का पोर्टफोलियो, बच्चों द्वारा बनाए/इकट्ठा किए चित्र, एनेकडोटल रिकॉर्डस् आदि को लिखित टिप्पणियों के साथ साझा कर नम्बर या ग्रेड की आकलन प्रणाली को बदला जा सकता है।

अन्त में

इस समूह के साथ लगातार चर्चा कर यह बात भी समझ में आती है कि इन शिक्षकों के ज़मीनी कार्यों के कारण सरकारी तंत्र में कोई इन पर सैद्धान्तिक होने का या अपने कार्यों में अनुभवों का उपयोग न करने का आरोप नहीं लगाता है। एक सामान्य समझ के तहत इस समूह के शिक्षकों ने पढ़ना-लिखना सिखाने की प्रक्रिया के अनिवार्य मंत्र को जान लिया है जिसके तहत पढ़ना-लिखना, सीखने-सिखाने के लिए बच्चों को पढ़ने और लिखने के अर्थ-पूर्ण मौके देना और उनके साथ संवाद करने की प्रक्रिया - इस समूह के सभी शिक्षक साथी अपनाते हैं।

सौरभ रॉय: अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, देहरादून में कार्यरत।
सभी चित्र: मैत्री डोरे: आर्किटेक्ट और चित्रकार हैं। सामाजिक और पर्यावरण सम्बन्धी चित्र बनाती हैं लेकिन बच्चों के लिए चित्र बनाना भी इन्हें पसन्द है। मुम्बई में रहती हैं।

सन्दर्भ सामग्री:

1. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005), राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली।*
2. *राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र 'भारतीय भाषाओं का शिक्षण' प्रथम संस्करण (2008), राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली।*
3. *आकलन स्रोत पुस्तिका हिन्दी (2008), राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली।*
4. *बच्चे की भाषा और अध्यापक (2003), कुमार कृष्ण, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।*

सृजन में भाषा बाधा नहीं बनती

एक सिरिंज पर वार्निश चढ़े ताँबे के तार के 500 घेरे लपेट कर तार के दोनों सिरों पर एल.ई.डी. लगाइए। सिरिंज का पिस्टन निकाल कर भीतर थोड़ी-सी रुई रखिए फिर नियोडायनियम का ताकतवर चुम्बक सिरिंज के भीतर रखकर, अँगूठे से सिरिंज का मुँह बन्द करके, सिरिंज को आगे-पीछे हिलाइए और देखिए क्या एल.ई.डी. जल रहा है?

संदर्भ मराठी एवं गुजराती भाषा में भी उपलब्ध है

सम्पर्क कीजिए

संदर्भ (मराठी)

शैक्षणिक संदर्भ - संदर्भ सोसायटी
c/o समुचित इन्वायरो टेक प्राइवेट लिमिटेड,
फ्लेट न. 06, एकता पार्क को-ऑप हाउसिंग
सोसायटी, निर्मिति शोरूम के पीछे,
अभिनव हाई स्कूल के पास, लॉ कॉलेज रोड,
पुणे 411004, फोनः 020 - 25460138
ई-मेलः sandarbh.marathi@gmail.com

संदर्भ (गुजराती)

नचिकेता ट्रस्ट
आर्च दवाखाना के पास, नगारिया,
धरमपुर, ज़िला वलसाड,
गुजरात 396050
फोनः 02633 - 240409

पाठ योजनाः विविध मान्यताओं की पड़ताल

शोभा सिन्हा

स्थाई शिक्षक बनने से पहले किसी भी स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक को कई रीति-रिवाज़ों से होकर गुज़रना पड़ता है। पढ़ाए जाने वाले पाठों की योजनाओं को लिखना उनमें से एक है। ये विद्यार्थी (स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक) पाठ योजना की छोटी-से-छोटी बारीकियों को तय करने में बहुत सारा समय और ऊर्जा लगाते हैं। वे इसे लिखने में लगने वाले समय को समय की बरबादी मानते हैं और इसे एक दण्ड के रूप में लेते हैं। हालाँकि जल्दी ही वे इस हकीकत को स्वीकार कर लेते हैं पर उनमें से कइयों को इसे लिखने की उपयोगिता समझ में ही नहीं आती। अक्सर ऐसा होता है कि ये शिक्षक, शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम को पूरा करने और 'असली शिक्षक' बनने के बाद इस योजना प्रारूप का उपयोग कभी नहीं करते। हालाँकि शिक्षक प्रशिक्षक पूरी तैयारी के साथ कक्षा में जाने की ज़रूरत पर कभी प्रश्न खड़ा नहीं करते, पर उनमें से कई ऐसे ज़रूर होते हैं जो

पाठ-योजना की रूपरेखा और उसकी निम्नस्तरीय गुणवत्ता को लेकर संशय का भाव रखते हैं। एक तरफ, जहाँ कुछ शिक्षक प्रशिक्षक पाठ योजनाओं की गैर-लचीली और अपरिवर्तनीय प्रकृति तथा उसके घातक परिणामों के बारे में चिन्तित रहते हैं। दूसरी तरफ, ऐसे शिक्षक प्रशिक्षक भी हैं जो पाठ योजना को अपने आप में ही साध्य मानते हैं और उसे बनाने के उद्देश्य को समझने में विफल रहते हैं। मैंने हाल ही में एक समीक्षा बैठक में हिस्सा लिया था जहाँ बोर्ड के सदस्यों को बुनियादी सैद्धान्तिक मान्यताओं की बजाय पाठ योजना को लिखने से जुड़ी तकनीकी बातों की ज़्यादा चिन्ता थी। उन्हें वर्तनी, व्याकरण, साफ-सुथरे ढंग से लिखने, और इसी तरह की अन्य बातों की फिक्र थी। एक बार एक सदस्य इसलिए बहुत व्यथित हो गई थीं कि एक स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षिका अँग्रेज़ी (ईएसएल) का पाठ पढ़ा रही थी पर उसने पाठ योजना हिन्दी में लिख दी थी। दुर्भाग्यवश, उस बोर्ड सदस्य का ज़ोर पाठ योजनाओं से जुड़े रस्मों-रिवाज़ों पर ज़्यादा था बजाय की उसकी व्यवहारिक प्रकृति से। मैं सोच में पड़ गई कि आखिर क्यों वे स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षिका से यह पूछने की बजाय कि वे सिद्धान्त और व्यवहार के बीच के ज़रूरी सम्बन्धों को कैसे स्थापित कर पा रही थी, इतने मामूली प्रश्न पूछ रही थीं। मेरे हिसाब से ज़्यादा महत्वपूर्ण बात थी ईएसएल को पढ़ाने की स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षिका की योजनाओं की पड़ताल करना। अपनी योजनाओं को रेखांकित करने के लिए उसने जिस भाषा का चयन किया था उसका महत्व नगण्य था।

इन सभाओं और टिप्पणियों ने मुझे यह सोचने पर मजबूर कर दिया कि शिक्षक प्रशिक्षकों के रूप में क्या हमने यह समझा भी है कि पाठ योजना बनाने की इस प्रक्रिया का अर्थ दरअसल है क्या? इसे एक ऐसे पवित्र दस्तावेज़ के रूप में देखा जाता है जिसे किसी शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम की आवश्यकताओं को लिखने और पूरा करने के लिए लिखा जाना चाहिए। शिक्षक प्रशिक्षकों को दरअसल इस बारे में चिन्तित होना चाहिए कि पाठ योजनाएँ किस प्रकार शिक्षक प्रशिक्षण के लक्ष्यों को पूरा करने में योगदान करती हैं। हमें अपने लक्ष्यों के बारे में भी स्पष्ट होने की ज़रूरत है। क्या हम खुद को मौजूदा शिक्षा व्यवस्था के उपयुक्त ढालना चाहते हैं या उस पर सवाल खड़े करना चाहते हैं? हमें पाठ योजनाओं के अन्तर्निहित सीखने-सिखाने की प्रक्रिया से जुड़ी मान्यताओं की भी बारीकी से पड़ताल करने की ज़रूरत है।

इस पत्र में, सबसे पहले मैं पाठ योजनाओं से जुड़ी समस्याओं और

बुनियादी धारणाओं की चर्चा करूँगी। दूसरे भाग में, मैं इन समस्याओं को सुलझाने के वैकल्पिक तरीकों की पड़ताल करूँगी।

समस्याएँ और बुनियादी धारणाएँ

पाठ योजनाएँ एक बेहद थकाऊ और उबाऊ संरचना पर आधारित होती हैं जिसमें उद्देश्य (जिसमें व्यापक, विशिष्ट, व्यवहार-सम्बन्धी, भावात्मक और मनोप्रेरक सम्बन्धी उद्देश्य शामिल होते हैं); उपयोग की जाने वाली सामग्री; पृष्ठभूमि; कार्यविधि (जिसमें शिक्षण के बिन्दु, पद्धति, विकासात्मक प्रक्रिया शामिल होती है); सार; आकलन और ब्लैकबोर्ड पर दिए जाने वाले सार-वर्णन के उदाहरण शामिल होते हैं। यह कोई सम्पूर्ण सूची नहीं है और ज़रूरी नहीं है कि ये सभी पहलू सभी योजनाओं में शामिल हों। लेकिन इससे किसी पाठ योजना के विस्तृत ढाँचे तथा उसे तैयार करने के लिए किए जाने वाले काम का अच्छा खासा भान हो जाता है।

यदि कोई व्यक्ति पाठ योजनाओं में बदलाव की किसी रचनात्मक अभिव्यक्ति को तलाशने की आशा रखता है तो उसे सिर्फ निराशा ही हाथ लगेगी। मूलतः ये योजनाएँ उतनी ही हताशाजनक हैं जितना आम तौर पर होने वाला शिक्षण। इसके अन्दर कक्षा में होने वाले सीखने-सिखाने के आदान-प्रदान की सोच को लेकर कुछ भी नया नहीं होता। बच्चे को ज्ञान व जानकारियों का निष्क्रिय ग्राहक मान लिया जाता है, ज्ञान बस पाठ्यपुस्तकों में होता है तथा शिक्षक उसे बच्चों तक पहुँचा देता है। बहुत थोड़ी पाठ योजनाएँ ऐसी होती हैं जो कक्षा में होने वाले सीखने-सिखाने के आदान-प्रदान की बुनियादी प्रकृति को चुनौती देती हैं। शिक्षण के इस पारम्परिक रूप तक पहुँचने के लिए स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक निश्चित ही पाठ योजनाओं के बेहद घुमावदार रास्ते को अपना लेता है।

सामान्यतः योजनाओं के उद्देश्य ऐसे होते हैं जो बच्चे पर और सीखने की प्रक्रिया पर ध्यान केन्द्रित करने की बजाय उस विषयवस्तु पर ध्यान केन्द्रित करते हैं जिस पर एक तय समय-सीमा में अधिकार हासिल करना होता है। शिक्षण-प्रशिक्षण के विद्यार्थियों की योजनाओं से लिए गए निम्नलिखित उद्देश्य इस बात को स्पष्ट करते हैं:

- बच्चे अलग-अलग पेड़ों और वनस्पतियों के नाम पहचानेंगे
- वे द्वितीय विश्वयुद्ध के तात्कालिक परिणामों को जान पाएँगे
- वे सिंचाई के साधन के बारे में जानेंगे
- वे अर्थशास्त्र और अर्थव्यवस्था के बीच के अन्तर को समझेंगे

- वे प्रमुख खाद्य फसलों से जुड़ी मिट्टी की दशाओं के बारे में जानेंगे
- वे वसा के विभिन्न स्रोतों की सूची बनाएँगे
- वे ऊर्जा को परिभाषित कर पाएँगे।

इसके बाद ये बिन्दु जिस अध्याय में हैं उसे कई भागों में विभक्त कर दिया जाता है और प्रत्येक भाग को पाठ योजना में 'शिक्षण बिन्दुओं' या 'विषयवस्तु' के रूप में सूचीबद्ध कर दिया जाता है जिसके साथ एक स्तम्भ भी होता है जिसमें बताया जाता है कि बच्चे इस जानकारी को किस प्रकार हासिल करेंगे। इस पद्धति में मुख्य भूमिका शिक्षक के व्याख्यान की है और यदा-कदा यह जानने के लिए प्रश्न किए जाते हैं कि बच्चों को समझ में आया है कि नहीं। प्रश्नों की प्रकृति सामान्यतः मूल्यांकन की होती है और उन्हें विषय की गहराई से पड़ताल करने के लिए उपयोग नहीं किया जाता। कभी-कभार स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक शिक्षण के अपने तरीके में प्रदर्शन (विज्ञान में), या फिर कोई चार्ट या मानचित्र दिखाने, प्रश्नावली तथा यदा-कदा नाटक को शामिल कर लेते हैं।

पाठ योजनाएँ व पाठ्यपुस्तकें

इन पाठ योजनाओं की एक काफी आम विशेषता, खास तौर से अगर वे ऊँची कक्षाओं के लिए बनाई गई हों, यह होती है कि वे बेहद लम्बी होती हैं। अक्सर उनमें इस्तेमाल की जा रही पाठ्यपुस्तक के पूरे अध्याय को दोहरा दिया जाता है। ये योजनाएँ पूरी तरह से पाठ्यपुस्तक पर निर्भर होती हैं और 'सीखने के बिन्दु' पाठ्यपुस्तक के अध्यायों के अनुरूप होते हैं। वांछित 'शिक्षण बिन्दुओं' तक पहुँचने के लिए कभी-कभार बीच में प्रश्न भी डाल दिए जाते हैं। उदाहरण के लिए, मैंने जनसंख्या सम्बन्धित अर्थशास्त्र के कई अध्यायों का अवलोकन किया। अलग-अलग स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षकों ने इसे व्याख्यानों और सवालों के माध्यम से पढ़ाया। दिलचस्प बात है कि, जिन बिन्दुओं को उन्होंने प्रस्तुत किया और उन्हें जिस क्रम में जमाया था, वे करीब-करीब एक-दूसरे के समान थे। एकमात्र अन्तर यह था कि एक ने उन्हें ब्लैकबोर्ड पर सूचीबद्ध किया था और दूसरे ने चार्ट में। एक कक्षा में बच्चे कुछ अलग बिन्दु लेकर आए पर उन्हें हटा दिया गया क्योंकि वे पाठ्यपुस्तक में दी गई सूची से मेल नहीं खाते थे। उनसे बात करते समय मैंने पाया कि शिक्षण के लिए उनकी प्रमुख स्रोत सामग्री पाठ्यपुस्तक थी और हालाँकि ऊपरी तौर पर वे बच्चों से सोचने और चिन्तन करने के लिए कहते थे, लेकिन सही उत्तर जो कि पाठ्यपुस्तक के अध्याय पर आधारित होता था, पहले से ही उनकी योजना में रहता

था। स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक की कक्षा में पाठ्यपुस्तक की वैसे ही सर्वप्रमुख भूमिका थी जैसे कि किसी नियमित शिक्षक की कक्षा में होती है।

यदि हम स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक द्वारा शिक्षण के दौरान होने वाले आदान-प्रदान में इस्तेमाल की जाने वाली भाषा की पड़ताल करें तो हम कक्षा के सन्दर्भ में सीखने को लेकर उनकी सोच के बारे में महत्वपूर्ण अन्तर्दृष्टि प्राप्त करेंगे। पाठों को 'पढ़ दिया जाता' है या 'पेश कर दिया' जाता है और बिन्दुओं को 'पूरा' कर लिया जाता है। यह शब्दावली कक्षा के सन्दर्भ में ज्ञान को लेकर उनकी मान्यताओं को स्पष्ट करती है। वे इसे तय किया जा चुका और पूर्व-निर्धारित मानते हैं। उनके अनुसार शिक्षक का काम है इस ज्ञान या जानकारी को बच्चों तक पहुँचा देना और बच्चों का काम है उसे निष्क्रिय रहकर ग्रहण कर लेना। बच्चों को इसका सृजन करने की गुंजाइश नहीं दी जाती। ज्ञान के सृजन से जुड़ी प्रक्रिया-सम्बन्धी पहलुओं पर लगभग कोई ध्यान नहीं दिया जाता। ज्ञान को बस पाठ्यपुस्तक में बसने वाली चीज़ मान लिया जाता है। निम्नलिखित उदाहरण इस बात को स्पष्ट करते हैं।

एक स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षिका ने अपनी पाठ योजना में इस बात को समझाया कि वह किस प्रकार कक्षा में चर्चा को आयोजित करेंगी। 'वे प्रत्येक महत्वपूर्ण शब्द के लिए पहले विद्यार्थियों के जवाब जानेंगी और फिर ऐसे हर शब्द को समझाएँगी'। इस उदाहरण से यह स्पष्ट है कि हालाँकि वे चर्चा के प्रारूप का उपयोग कर रही थीं पर उन्हें इस बारे में ज़्यादा भरोसा नहीं था कि बच्चे कोई महत्वपूर्ण बात कह सकते थे। तो उन्हें कक्षा में भागीदारी के लिए थोड़ी-सी प्रतीकात्मक जगह देकर उन्होंने बच्चों को सर्वाधिक 'सही' व्याख्या दी।

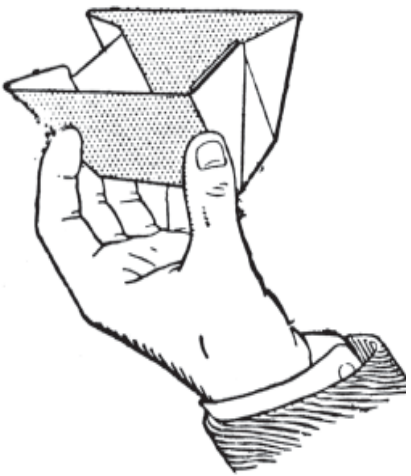

एक अन्य स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक ने पहले कठोर और मृदु जल के बीच के अन्तरों को समझाने की योजना बनाई और फिर एक प्रयोग के द्वारा उनके अन्तरों को प्रदर्शित किया। उन्होंने अपने विद्यार्थियों को इस प्रयोग के दौरान इन दोनों तरह के जल के बीच

के अन्तर देखने को कहा। इस मामले में, प्रयोग सिर्फ एक तथ्य को सुनिश्चित करने के लिए किया जाना था, यह अपने आप में ज्ञान का कोई स्रोत नहीं था। इस प्रदर्शन का परिणाम पहले से ही तय था।

एक और मामले में, मैंने शिक्षक-प्रशिक्षण की एक विद्यार्थी को किसी विषय पर एक चर्चा का आयोजन करने की सलाह दी। लेकिन, वह इस बात को लेकर चिन्तित थी कि उसने अपनी पाठ योजना में जिस तरह से इस विषय के मुख्य बिन्दुओं को सूचीबद्ध किया था, बच्चे उन्हें पहचान नहीं पाएँगे। ऐसी ही एक अन्य विद्यार्थी ने मुझे बताया कि जब बच्चे 'चर्चा' कर रहे होते थे तो उसे लगातार बीच में हस्तक्षेप करना पड़ता था ताकि बच्चे गलत उत्तर न दे दें। बिलकुल स्पष्ट था कि इनमें से कोई भी बच्चों के दृष्टिकोण पर या तर्कसंगत विचारों को सामने लाने की उनकी क्षमता पर भरोसा करने के लिए राज़ी नहीं थीं। ये दोनों ही ज्ञान को तथ्यात्मक और पूर्व-निर्धारित मानती थीं।

शिक्षक तथा बाल केन्द्रित शिक्षा

यह बात दिलचस्प है कि स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक बहुत जल्दी 'बाल-केन्द्रित' शब्द से परिचित हो जाते हैं। लेकिन वे इसे पूर्णतः भावात्मक अर्थों में लेते हैं यानी बच्चों के साथ मित्रवत, प्रेमपूर्ण और दिलचस्प रहना। बच्चे सीखते वक्त जिन संज्ञानात्मक (कॉग्निटिव) प्रक्रियाओं से गुज़रते हैं उनकी समझ इस अर्थ में शामिल नहीं रहती। विरले ही ऐसा होता है कि पाठों में बच्चे की विकासात्मक ज़रूरतों पर विचार किया गया हो या अपने खुद के विचार या दृष्टिकोण रखने के लिए उसे श्रेय दिया जाता हो। ऊपर दिए गए सारे उदाहरण इस बात को स्पष्ट करते हैं। स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक बच्चों को सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय भूमिका नहीं देना चाहते। इन कक्षाओं में अपने से चीज़ों की खोजबीन करने और उन्हें समझने के प्रयास को सही नहीं माना जाता। वे भले ही अपने शिक्षा पाठ्यक्रमों में शिक्षक की मार्गदर्शक की भूमिका के बारे में बात करते हों, लेकिन असलियत में वे बच्चों पर इतना भरोसा नहीं करते कि उन्हें चीज़ों के बारे में अनुमान लगाने या उनकी पड़ताल करने के मौके दिए जाएँ। इसलिए, भले ही शिक्षा पाठ्यक्रमों में बाल-केन्द्रित पद्धतियों को शामिल किया जाता हो, लेकिन असलियत में इसे सिर्फ सतही रूप से समझा जाता है। संज्ञानात्मक अर्थों में इसे बिलकुल भी नहीं समझा जाता।

इस बात पर ध्यान देना दिलचस्प है कि यही विद्यार्थी बड़ी जल्दी स्कूली व्यवस्था की आलोचना करने लगते हैं। वे भारत में शिक्षा की दुखद

स्थिति से अवगत होते हैं और नवीनता तथा बदलाव की ज़रूरत को पहचानते हैं। लेकिन, नवीनता की उनकी रचना अपने आप में एक दिलचस्प अध्ययन साबित होगा। अक्सर, स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षकों को लगता है कि यदि उसी विषयवस्तु को वे आकर्षक या 'चुलबुले' ढंग से वर्णन करें तो उनकी योजना मौलिक योजना हो जाती है। उदाहरण के लिए, मैंने एक विद्यार्थी को माध्यमिक स्कूल में कविता पढ़ाते हुए देखा। उसने एक बेहद जटिल गतिविधि की योजना बनाई थी। बच्चों ने कविता पढ़ी और फिर वे समूहों में बँट गए। फिर हर समूह में से बच्चों को सामने आना था और उन्हें आँखों पर पट्टी बाँध दी गई। उन्हें कविता की विषयवस्तु से जुड़ी एक तस्वीर को छूना था और तस्वीर के इस छुए गए हिस्से (ऊपरी, बीच वाला, या निचला) के आधार पर उन्हें बक्से से एक प्रश्न चुनना था। बक्से में तीन अलग-अलग रंगों के कागज़ों में प्रश्न लिखे हुए थे। तो यदि वे ऊपरी भाग को छूते तो उन्हें हरे कागज़ के टुकड़े में लिखा गया प्रश्न चुनना था इत्यादि। प्रश्न चुनने के बाद उन्हें उसका उत्तर देना था और कक्षा के बाकी बच्चों को इसे लिखना था। इस विस्तृत गतिविधि के परिणामस्वरूप बच्चों ने कविता के स्मरण पर आधारित कुछ प्रश्नों के उत्तर दिए जैसे कवि का नाम, कविता में पंक्तियों की संख्या, और तुकान्त शब्द। स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षिका ने अपनी पाठ योजना में लिखा कि उसने यह गतिविधि इस ढंग से इसलिए रची थी ताकि विद्यार्थियों में कविता को लेकर रुचि जगे और उनका उत्साह कायम रहे। दुर्भाग्यवश, उसके ईमानदार प्रयासों के बाद भी, जहाँ तक कक्षा में कविता को पढ़ने की केन्द्रीय गतिविधि का सवाल था उसमें कोई खास बदलाव देखने को नहीं मिला था। शिक्षिका के सवालों से बच्चों की समझ या कविता के प्रति उनकी प्रतिक्रिया के बेहतर हो जाने की सम्भावना नहीं थी। उसकी तरह कई शिक्षक कविता पढ़ाकर उसके बारे में तथ्यात्मक सवाल पूछते हैं। उसने अपनी सामग्री तैयार करने में दो घण्टे बरबाद किए थे। इतनी मेहनत करने के पीछे उसकी ईमानदारी और तत्परता प्रशंसा के योग्य है लेकिन बुनियादी अर्थों में साहित्य को पढ़ने की उसकी समझ आम तौर पर इस्तेमाल किए जाने वाले तरीकों से बहुत भिन्न नहीं थी। सीखने-सिखाने के आदान-प्रदान की बुनियादी प्रक्रिया अनछुई रही, बस उसमें आभूषण जोड़ दिए गए।

नवीनता कई अन्य बेतुके रूपों में सामने आती है। ऐसी विस्तृत गतिविधियों के अलावा स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक व्यापक रूप से सहायक दृश्य सामग्री का उपयोग करते हैं। एक ऐसे देश में जहाँ पाठ्यसामग्री व साधनों के

मामले में कक्षाओं में बहुत-सी कमियाँ होती हैं, ऐसी नूतनता भी बहुत महत्वपूर्ण दिखाई देती है। लेकिन, दुखदायी बात यह है कि इस प्रकार की नवीनता भी सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में कोई आमूलचूल परिवर्तन नहीं करती। सिर्फ रंगीन थेगड़े जोड़ दिए जाते हैं, उदाहरण स्वरूप, बड़े भारी प्रयास के बाद बनाए गए पोस्टर। लिहाज़ा किसी ग्राम पंचायत पर बनाए गए पोस्टर में किसी मेज़ के इर्द-गिर्द पगड़ी बाँधे कई आदमी दिखाई देंगे, या किसी जानवर पर कोई कविता पढ़ाने के लिए शिक्षक को उस जानवर का पोस्टर लगाना मजबूरी लगेगी, या शिक्षण-प्रशिक्षण का विद्यार्थी जिस विषय को पढ़ा रहा होगा वह उससे सम्बन्धित बिन्दुओं को लिखकर कक्षा के समक्ष दिखाएगा जबकि वे बिन्दु पहले से ही पाठ्यपुस्तक में दिए गए होते हैं। ये विस्तृत उपाय बच्चों की समझ को बढ़ाने में किसी भी तरह का योगदान नहीं करते। ये सिर्फ कार्यक्रम की ज़रूरतों को पूरा करने में मदद करते हैं।

कई स्कूलों में जाकर स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षकों से बात करने के बाद इस हकीकत ने मुझे बड़ा अचम्भित किया है कि योजना बनाने से पहले बमुश्किल ही कोई पढ़ाई की जाती है। उन्हें इस बात का भी एहसास नहीं होता कि योजना बनाने से पहले शिक्षा के बारे में पढ़ना कितना ज़रूरी है जिससे यह पता चलता है कि सैद्धान्तिक समझ को कितने हल्के तौर पर लिया जा रहा है। वे अपना समय ढेर सारी गतिविधियों में भाग लेते हुए तथा अन्तहीन ज़रूरतों को पूरा करने में गुज़ार देते हैं। इसके अलावा, उनमें से अधिकांश लोग सहायक दृश्य सामग्री (अधिकांशतः पोस्टर) को तैयार करने में व्यस्त रहते हैं जो किसी भी प्रकार की समझ विकसित करने में मदद नहीं करते। यह सब करने के चक्कर में उन्हें पढ़ने का या विभिन्न विचारों पर चिन्तन करने का समय ही नहीं मिलता। इस तरह, वे इतनी विस्तृत पाठ योजनाएँ लिख देते हैं जो किताब के अध्यायों का पुनर्निरूपण भर रह जाती हैं। यह वाकई में शिक्षा कार्यक्रमों की त्रासदी है कि स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक सहायक गतिविधियों में इतने उलझे हुए रहते हैं कि शिक्षण का केन्द्रीय तत्व (सिद्धान्तों के बारे में जानना और कक्षा के सन्दर्भ में उन्हें समझना) उनके ध्यान से निकल जाता है। आखिरकार, पाठ योजनाओं की लम्बाई, विद्यार्थियों द्वारा उनमें लगाया जाने वाला समय और ऊर्जा, तथा किसी भी तरह की सैद्धान्तिक समझ की कमी इस तथ्य को साबित करती है कि शिक्षा विभाग व्यस्तता से भरे कार्यों को सोच-विचार से ज़्यादा महत्व देते हैं।

यहाँ सिद्धान्त और व्यवहार के बीच कोई भी सम्बन्ध नहीं है। सिद्धान्त

विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों में मौजूद रहते हैं जबकि व्यवहार स्कूल की वास्तविकताएँ होती हैं। कई बार तो स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षकों को सूझता ही नहीं है कि उन्हें यह सम्बन्ध करना है। वे इन दोनों बातों को अलग-अलग खाँचों में रख देते हैं। इसीलिए वे पाठों को तैयार करने से पूर्व शिक्षा के बारे में पढ़ने की ज़रूरत से इतने अनभिज्ञ हैं। इस समस्या का एक कारण कक्षा-आधारित शोध का पूर्णतः अभाव होना भी है। ये पाठ्यक्रम व्यापक मुद्दों को उठाते हैं और अपेक्षा की जाती है कि विद्यार्थी ज़रूरी सम्बन्ध अपने आप स्थापित कर लेंगे। कक्षा के अनुरूप सिद्धान्तों की समझ का न होना, पाठ्य सामग्री की कमी, और अच्छे वैकल्पिक प्रतिरूपों का न होना इस समस्या को और अधिक बढ़ा देता है।

सीखने-सिखाने में मददगार पाठ योजनाएँ

पाठ योजना को न सिर्फ सोमवार सुबह की तैयारी में मददगार होना चाहिए बल्कि उन्हें सीखने और सिखाने के बारे में स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षकों के विचारों को साफ करने का साधन भी होना चाहिए। यह सिद्धान्तों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने की तरफ, तथा कक्षा के सन्दर्भ में सिद्धान्तों के अर्थ को तलाशने की तरफ बढ़ाया जाने वाला पहला कदम है। अतः एक रिवाज़ की बजाय यह लिखने के माध्यम से सीखने का साधन होना चाहिए। इसे शैक्षणिक सिद्धान्तों पर गहराई से विचार करने का और उन्हें समझने का सोचा-समझा प्रयास होना चाहिए। यदि स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक इसे सोचने के एक उपकरण के रूप में इस्तेमाल करता है तभी हम पाठ योजनाओं को लिखने की कवायद को न्यायोचित मान सकते हैं। अन्यथा यह सिर्फ और सिर्फ एक नीरस व निरर्थक कार्य बनकर रह जाता है।

शिक्षकों के बीच इस बात को लेकर काफी असहमति है कि पाठ योजना को किस प्रकार लिखा जाना चाहिए लेकिन सामान्यतः वे दो बातों के बारे में सहमत होते

हैं। पहला, कि योजना बनाना ज़रूरी है, और दूसरा कि इसे सिद्धान्त से जुड़ा हुआ होना चाहिए। हकीकत में इसका अर्थ काफी भिन्न है (खासकर दूसरी बात)। हमने पिछले खण्ड में देखा है कि पाठ योजना में सिद्धान्त के साथ तार जोड़ने की कोई कोशिश नहीं की जाती है। स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक पाठ योजनाओं को लिखने में कितनी भी मेहनत करें (और सामान्यतः वे बहुत अधिक मेहनत करते हैं), लेकिन वास्तव में, अगर हम शैक्षणिक सिद्धान्तों के साथ तादात्म्य स्थापित कर पाने की बात करें, उनके माध्यम से सोचने की बात करें, और उन्हें कक्षा के सन्दर्भ में अपनाने की बात करें, तो ये लोग इन कसौटियों पर खरा नहीं उतर पाते। शिक्षक प्रशिक्षक, अनजाने में, बहुत सारा समय लेने वाली अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करने में इन लोगों को लगाकर उन्हें इस परिस्थिति में धकेल देते हैं। इस तरह, शिक्षा को लेकर अस्पष्ट विचार इन पाठ योजनाओं में, और परिणामस्वरूप, वास्तविक शिक्षण में घुस आते हैं। समय आ गया है कि हम शैक्षणिक कार्यक्रमों में अस्पष्ट और धुँधले ढंग से तैरती शब्दावली को समझना शुरू करें: 'बाल-केन्द्रित शिक्षा', 'अनुभव-आधारित शिक्षा', 'ज्ञान का सृजन', 'शिक्षा को सुगम बनाना' तथा 'समीक्षात्मक सोच' कुछ ऐसे ही शब्द हैं। हमें इनकी चर्चा करने और कक्षा के सन्दर्भ में उनके निहितार्थों की पड़ताल करने के लिए कड़ा प्रयास करना चाहिए।

वैकल्पिक नीतियाँ अपनाने के लिए हमें इस विषय की तह में जाना ज़रूरी है। कक्षा में होने वाले सीखने-सिखाने के आदान-प्रदान के बुनियादी ढाँचे पर ध्यान देना और उसमें बदलाव करने की ज़रूरत है। जैसा कि पिछले खण्ड में बताया गया है, कक्षा में आम तौर पर होने वाले आदान-प्रदान में बच्चे की भूमिका निष्क्रिय मान ली जाती है जो बस ज्ञान 'ले लेता है', एक शिक्षक होता है जो ज्ञान 'दे देता है', और पाठ्यपुस्तकों में ही ज्ञान बसता है। जब तक इस बुनियादी ढाँचे को चुनौती नहीं दी जाएगी तो नवीनता लाने की कोई भी चर्चा निरर्थक ही रहेगी। नवाचार ऐसा होना चाहिए जो बुनियादी मान्यताओं पर ध्यान दे, न कि सतही मुद्दों पर। सबसे पहले, यह ज़रूरी है कि शिक्षक बच्चों के दृष्टिकोणों को भी स्वीकार करें और उन्हें कक्षा में होने वाले आदान-प्रदान में जगह दें तथा चीज़ों की खोजबीन करने और सीखने की उनकी क्षमता में भरोसा जताएँ। दूसरे, उन्हें कक्षाओं को इस ढंग से आयोजित करना पड़ेगा जहाँ खोजबीन सम्भव हो सके। इसके लिए उन्हें यहाँ-वहाँ से चीज़ें जोड़ने की बजाय सीखने की वास्तविक प्रक्रियाओं पर ध्यान देना

ज़रूरी है। इस प्रकार, बच्चों की भूमिका सक्रिय-रचनात्मक होना चाहिए, और शिक्षक की भूमिका एक मार्गदर्शक की होना चाहिए। पाठ्यपुस्तक पर उनकी अत्यधिक निर्भरता का स्थान कई स्रोतों को ले लेना चाहिए।

पाठ योजनाएँ किसलिए?

योजना का प्रारूप बहुत सरल होना चाहिए और उसमें निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर मिलना चाहिएः जो वे कर रहे हैं वे उसे क्यों करना चाहते हैं? अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उन्हें किन सामग्रियों की ज़रूरत है? इसे प्राप्त करने का उनका मार्ग क्या होगा? उन्हें सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में बच्चों को ज़रूरी पर निष्क्रिय भूमिका देने की बजाय अपना ध्यान बच्चों पर लगाने की ज़रूरत है। जब भी शिक्षण प्रशिक्षण के विद्यार्थी अपने दृष्टिकोण को बदलने की इस ज़रूरत को समझने लगेंगे तो पाठ योजनाएँ व्यवहारिक और कहीं ज़्यादा छोटी हो जाएँगी क्योंकि पाठ्यपुस्तक की विषयवस्तु को दोबारा लिखने की मजबूरी समाप्त हो जाएगी।

उद्देश्य अक्सर, योजना बनाने के सर्वाधिक समस्याजनक पहलू होते हैं। जैसा कि पिछले खण्ड में वर्णन किया गया था कि भारत में इसके अन्तर्गत अधिकांशतः छोटे-छोटे भागों में बँटे विषय क्षेत्र आते हैं। बच्चों की विचार प्रक्रियाओं पर कोई सही ध्यान नहीं दिया जाता। उनका मूल्य नहीं समझा जाता और बच्चों के सीखने के बारे में सोचने की बजाय शिक्षक का ध्यान किसी अध्याय को पूरा करने पर लग जाता है। इस प्रकार, पाठ योजनाएँ एक विषय-केन्द्रित कार्य पद्धति को दर्शाती हैं। भले ही कुछ प्रक्रियाओं का वर्णन व्यापक उद्देश्यों में किया जाता है, विशिष्ट उद्देश्यों में जाने पर ध्यान फिर से विषयवस्तु की ओर चला जाता है।

कभी-कभार, स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक किसी गतिविधि का वर्णन करके बच्चे पर ध्यान वापस लाने की कोशिश करते हैं। उदाहरण के लिए,

- बच्चे पाठ से जुड़े प्रश्नों के उत्तर देंगे
- बच्चे किसी प्रश्नोत्तर परीक्षा (क्विज़) में भाग लेंगे
- बच्चे कोई कहानी लिखेंगे
- वे अपनी कार्यपुस्तिका भरेंगे

उन्हें लगता है कि इस मामले में वे किसी बच्चे के दृष्टिकोण से चीज़ों को देख रहे हैं। लेकिन, इस तरीके में भी असली ज़ोर बच्चे पर न होकर किसी गतिविधि पर होता है। यह भी सिर्फ नाम के लिए गतिविधि करने

जैसा सतही काम हो सकता है बगैर यह जानते हुए कि इसे करने का उद्देश्य क्या है।

ज़्यादा बेहतर तरीका है इन बातों पर ध्यान केन्द्रित करना कि बच्चा क्या सीख सकता है (तथ्यात्मक ज्ञान के सन्दर्भ में नहीं बल्कि प्रक्रियाओं के बारे में भी), उसे और क्या सीखने में मदद की जा सकती है, तथा बच्चे सोचने के लिए कुछ खास तरह की योग्यताओं को विकसित कर सकें, इसके लिए किस प्रकार से उनकी मदद की जा सकती है। स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षकों द्वारा लिखे गए निम्नलिखित उदाहरण इस पद्धति को स्पष्ट करते हैं:

एक स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षिका दूसरी कक्षा के अपने विद्यार्थियों को पेड़ों का अवलोकन करवाने के लिए अध्ययन-भ्रमण पर ले जाने की योजना बना रही थी। उसने निम्नलिखित उद्देश्य लिखे:

- (बच्चे) महसूस करें कि किताबें ज्ञान का एकमात्र स्रोत नहीं हैं।
- महसूस करें कि उनके (बच्चों के द्वारा) प्रस्तुत किया गया ज्ञान, वाकई ज्ञान है और सही है।
- विद्यार्थी जीवों, प्राकृतिक क्रियाकलापों, और उन गतिविधियों से परिचित हो जाते हैं, जिनके होने का उन्हें पता नहीं होता और वे विज्ञान को वास्तविक दुनिया से जोड़ने लगते हैं।
- विद्यार्थी वृक्षों की छालों, संरचनाओं, और भौतिक विशेषताओं की तुलना करते हैं।
- वे वृक्ष पर आकार लेने वाले अन्य जीवनों को देखते हैं।

माध्यमिक स्कूल में सूचनापरक अध्ययन के लिए कुछ अन्य उद्देश्य लिखे गए थे:

- बच्चों को स्वतंत्र रूप से जानकारियों को खोजने के लिए प्रेरित करना।
- ज्ञान के स्रोतों की पहचान करना।
- स्वतंत्र रूप से पढ़ने के कौशलों को विकसित करना।
- सन्दर्भ का इस्तेमाल करते हुए अपरिचित शब्दों के अर्थ समझना (न कि सिर्फ हिन्दी के समतुल्य शब्दों पर निर्भर रहना)।

लेखन के लिए कुछ अन्य उद्देश्य लिखे गए थे:

- सामूहिक चर्चा के माध्यम से उभरे सम्भावित विचारों को लिखकर आपस में बाँटना और उनकी पड़ताल करना।

- लेखन-पूर्व कौशलों के बारे में सीखना।

पढ़ने के बारे में निम्नलिखित उद्देश्य लिखे गए थेः

- वे जो कुछ नया पढ़ते हैं और जो वे पहले से जानते हैं, उनमें सम्बन्ध स्थापित करने में मदद करना।
- कहानियों को सुनकर बच्चों की कहानियों में रुचि जागती है।
- कहानी के किसी किरदार के साथ सहानुभूति रखना।
- विषय रोज़मर्रा के जीवन से जुड़े होने के कारण बेहतर समझ बन पाना।

इन सभी मामलों में ज़ोर बच्चों पर तथा सीखने की प्रक्रियाओं पर रहा बजाय कि तथ्यात्मक ज्ञान पर होने के। इससे उन्हें सिद्धान्त को कक्षा के सन्दर्भ में समझने में भी मदद मिली।

पाठ योजना - विविध स्रोतों से सामग्री

विभिन्न पाठ्य सामग्रियों के बारे में सोचने से स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक को न सिर्फ खुद को सुव्यवस्थित करने में मदद मिलती है बल्कि इससे एक और महत्वपूर्ण उद्देश्य भी पूरा होना चाहिए। इसका शिक्षा के लक्ष्यों के साथ नज़दीकी जुड़ाव होना चाहिए। स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक को उसके द्वारा इस्तेमाल की जाने वाली वस्तुओं को सीखने के समग्र लक्ष्यों के सन्दर्भ में न्यायोचित ठहरा पाना चाहिए। उन्हें सिर्फ नाम के लिए और पाठ योजना में प्रभावशाली सूची बनाने की कोशिश में विभिन्न सामग्री नहीं इकट्ठा करना चाहिए। पिछले खण्ड में, मैंने स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षकों द्वारा ज्ञान के एकमात्र स्रोत के रूप में पाठ्यपुस्तकों के निर्विवाद उपयोग की चर्चा की है। विरले ही पाठ योजनाओं में अन्य सन्दर्भ मिलते हैं। इन विद्यार्थियों को पाठ्यपुस्तकों के अलावा अन्य पुस्तकों व पाठ्य सामग्रियों (पत्रिकाएँ, समाचार पत्र) को पढ़ने व उनका उपयोग करने की आदत डालना चाहिए। यह बहुत ज़रूरी है कि स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक खुद भी बहुत सारी अन्य पाठ्य सामग्रियों को देखें और बच्चों को भी ऐसा करने के लिए प्रेरित करें। इससे पाठ्यपुस्तकों की सर्वोच्चता को चुनौती देने में तथा गहरी समझ पैदा करने में मदद मिलती है। इसके लिए भी, बहुत-सी तैयारी और अग्रिम योजना बनाने की ज़रूरत होती है। लेकिन, यह दिलचस्प बात है कि कई स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षकों ने प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों के साहित्य का सफलतापूर्वक इस्तेमाल किया है। बड़ी कक्षाओं में भी ये बेहद ज़रूरी है कि बच्चे सीखने के लिए कई स्रोतों से रूबरू हों।

किताबों के अलावा, कक्षा में अन्य प्रकार की सामग्री की भी ज़रूरत होती है। पिछले खण्ड में मैंने गैर-ज़रूरी पूरक सामग्री के इस्तेमाल का वर्णन किया था जिसकी व्यवस्था करने में समय तो बहुत खर्च होता है लेकिन जहाँ तक बच्चों की समझ बढ़ाने का सवाल है तो उसमें ऐसी सामग्री का कोई बहुत योगदान नहीं होता। आकर्षक सामग्री का बन्दोबस्त करने में वे बहुत-सा समय और ऊर्जा गँवाते हैं। सामग्री की सुन्दरता पर ध्यान देने की बजाय हमें उसके उद्देश्य पर ध्यान देना चाहिए। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि मैं ऐसी कक्षा की वकालत कर रही हूँ जहाँ किसी भी तरह की सहायक सामग्री का इस्तेमाल ही न हो। दरअसल, रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में उपयोग में आने वाली वस्तुओं का बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग करने से बच्चों की समझ को बढ़ाने में बहुत मदद मिलती है। उदाहरण के लिए, प्राथमिक कक्षाओं में पत्तियों या कंचों जैसी साधारण चीज़ों को भी बच्चों को विभिन्न अवधारणाओं को समझाने के लिए इस्तेमाल में लिया जा सकता है। माध्यमिक स्कूल में एक स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षिका ने अपने विद्यार्थियों को रसायन शास्त्र की कक्षा में चिकित्सकीय लेबलों को पढ़ने व उनकी चर्चा करने के लिए बुलाया था।

शिक्षक – मार्गदर्शक की भूमिका

कक्षा की प्रक्रियाओं में तबदीली लाने के लिए नियोजन में क्रान्तिकारी बदलाव की ज़रूरत है। अक्सर, स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक बच्चों को 'दी जाने वाली' तमाम विषयवस्तु (पाठ्यपुस्तक पर आधारित 'विषय सूची' या 'शिक्षण बिन्दु') का वर्णन करने में इतने व्यस्त रहते हैं कि वे शिक्षक की मार्गदर्शक की भूमिका को भूल जाते हैं। पाठ योजनाओं के अधिकांश हिस्से में इस बात का वर्णन होता है कि शिक्षक क्या करेगा। उदाहरण के लिए, शिक्षक व्याख्यान देता है, समझाता है, बताता है, सवाल पूछता है और कभी-कभी किसी प्रयोग को दर्शाता है। भारतीय कक्षाओं में बच्चों को ऐसी निष्क्रिय भूमिकाएँ दी जाती हैं कि उन्हें सक्रिय भूमिकाएँ निभाने के लिए तैयार करने हेतु शिक्षण प्रक्रिया को नए ढंग से तैयार करने की ज़रूरत है। इसे हासिल करने के लिए स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षकों को सीखने के प्रक्रियात्मक पहलुओं पर ध्यान देने की ज़रूरत है। उन्हें सीखने के, तथा बच्चों के विकास के प्रासंगिक सिद्धान्तों को कक्षाओं में लागू करने की ज़रूरत है। बेहतर होता है अगर स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक बच्चों को दिमाग में रखकर अपनी योजना बनाएँ तथा पूरी प्रक्रिया को उनकी शब्दावली में व्यक्त करें। बच्चों को चर्चा करने, सवाल करने, अवलोकन करने, विश्लेषण करने, विचारों को लागू करने, प्रयोग करने, परिकल्पना

करने, विचारों को सामने रखने, पढ़ने और लिखने के मौके मिलना चाहिए। शिक्षकों को अपने विद्यार्थियों के साथ सीखने की ज़िम्मेदारी को बाँटना चाहिए। ऐसा करने के लिए शिक्षकों को बड़ी मेहनत करके ऐसी कक्षा की योजना बनाना होगी जहाँ बच्चे ऐसी लाभप्रद गतिविधियों में जुट सकें।

जिन दो क्षेत्रों पर मैं ज़ोर देना चाहूँगी वे हैं सवाल करना और चर्चा करना। हालाँकि सवालों का उपयोग सभी विषय क्षेत्रों के सभी शिक्षकों द्वारा इस्तेमाल किया जाता है लेकिन सवाल बड़े निराशाजनक होते हैं। वे सामान्यतः स्मरण से जुड़े रहते हैं और किसी प्रकार की सोच या समझ को बढ़ावा नहीं देते। जब शिक्षक ऐसे सवाल पूछते हैं तो उनके जवाबों को सही या गलत के सन्दर्भ में आँकने के अलावा उनके पास कोई चारा नहीं होता। ऐसी परिस्थिति में ज्ञान तथ्यात्मक और पूर्व-निर्धारित हो जाता है। विचारोत्तेजक, खुले सवाल पूछना आसान नहीं होता। शिक्षकों को ऐसे प्रश्न ध्यानपूर्वक तैयार करना चाहिए। उस दिशा में एक शुरुआत ऐसे सवाल तैयार करके हो सकती है जिनका कोई एक सही या गलत जवाब नहीं हो।

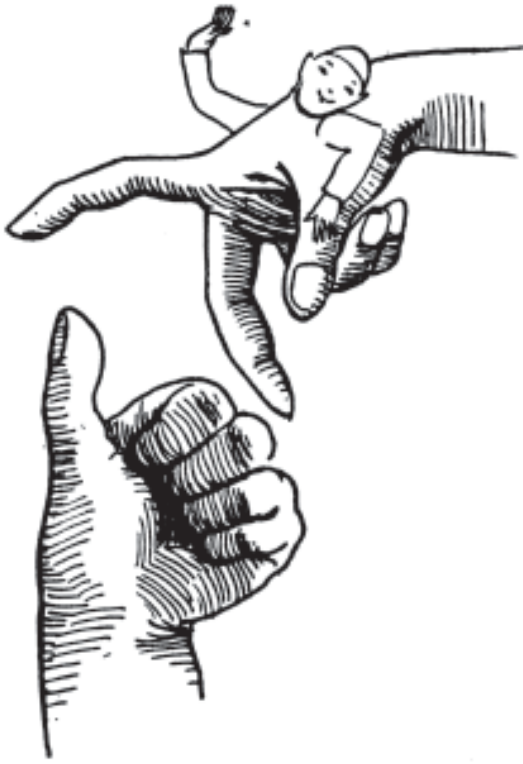

चर्चा, पाठ योजना का एक ऐसा क्षेत्र है जिसे गलत ढंग से समझा गया है और उसकी क्षमता का सही आकलन नहीं किया गया है। कभी-कभी कक्षाएँ बहुत जीवन्त और सक्रिय प्रतीत होती हैं और अच्छी चर्चा का छलावा देती हैं। असलियत में, शिक्षक सवाल पूछते हैं और बच्चे जवाब दे देते हैं। शिक्षक सिर्फ सही उत्तर की तलाश में रहते हैं। विचारों की गहराई से पड़ताल नहीं की जाती। इसलिए, चर्चा की योजना बनाना और उसकी

गतिशीलता को समझना ज़रूरी है। चर्चा ऐसी होना चाहिए कि बच्चे सवाल पूछ सकें, एक-दूसरे के विचारों पर प्रतिक्रिया दे सकें, और विभिन्न दृष्टिकोणों से वाकिफ हो सकें। खुले प्रश्न, समूह-कार्य, और एक-दूसरे के अनुभव बाँटना कुछ ऐसे तरीके हैं जिनके माध्यम से किसी चर्चा को अंजाम दिया जा सकता है। इसलिए, योजना में इन बातों का ज़िक्र होना चाहिए कि चर्चा का संचालन कैसे किया जाएगा, शिक्षक उसमें क्या मार्गदर्शन देंगे, न कि सीधे-सीधे उस विषयवस्तु को सूचीबद्ध करना जिसे विद्यार्थी चर्चा से सीखेंगे।

***

अन्त में, मैं यह कहना चाहूँगी कि पाठ योजना की सतही विशेषताओं पर ध्यान देना ही काफी नहीं है बल्कि उसकी बुनियादी धारणाओं की पड़ताल करना भी ज़रूरी है। यह स्पष्ट है कि शिक्षण की बुनियादी संरचनाएँ नहीं बदलतीं, और नूतन नीतियों के नाम पर सिर्फ रंग-बिरंगे पैबन्द जोड़ दिए जाते हैं। विद्यार्थी पर ध्यान देने वाली वैकल्पिक नीतियों को विकसित करने की ज़रूरत है।

निश्चित ही, योजना बनाने की वैकल्पिक नीतियों को लेकर लोग इस आधार पर संशय जता सकते हैं कि ये वर्तमान स्कूली व्यवस्थाओं में सम्भव नहीं होंगी। ऐसा कोई भी व्यक्ति जिसने शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में काम किया हो, स्कूलों के साथ की जाने वाली वार्ताओं के महत्व को कम करके नहीं आँक सकता। शिक्षक प्रशिक्षकों को यह मानकर नहीं चलना चाहिए कि इन नीतियों को सब हाथों-हाथ स्वीकार कर लेंगे। इसलिए, चर्चाएँ एवं संवाद लगातार चलना चाहिए। बड़ी कक्षाओं में ऐसा करना और भी ज़्यादा चुनौतीपूर्ण होगा क्योंकि इन कक्षाओं में परीक्षाओं का दबाव कहीं अधिक होता है। स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक द्वारा अपनी योजनाओं को लागू करने की गुंजाइश बन सके इसके लिए और ज़्यादा बातचीत की ज़रूरत है। लेकिन प्रेरणादायी बात यह है कि वैकल्पिक नीतियों से जुड़ी योजनाएँ स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक के साथ किए गए वास्तविक काम पर आधारित हैं।

मेरे अनुभव में, जब शिक्षण-प्रशिक्षण के विद्यार्थी शैक्षणिक सिद्धान्तों से परिचित भी होते हैं, तब भी वे उन्हें शिक्षण में लागू करने में असफल हो जाते हैं। आंशिक रूप से ऐसा इसलिए होता है क्योंकि प्रारम्भिक शिक्षण बहुत ही बड़ा अनुभव होता है तथा वे कक्षा के चिर-परिचित ढाँचे पर ही वापस चले जाते हैं। पाठ्यपुस्तकों, परीक्षाओं और परम्परा की संयुक्त

ताकत संघर्ष कर रहे स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक पर भारी पड़ती है। इसके अलावा, कक्षा की परिस्थितियों की पर्याप्त समझ के बिना तथा अभिनव शिक्षण के सन्दर्भ में आदर्शों के अभाव में वे शिक्षण की योजना बना लेते हैं। इसलिए शिक्षक-प्रशिक्षकों की भूमिका बेहद अहम हो जाती है। उन्हें अपने विद्यार्थियों को शैक्षणिक सिद्धान्तों के बारे में बताना नहीं भूलना चाहिए तथा उन्हें विभिन्न सम्बन्ध स्थापित करने में मदद करना चाहिए। अत्यधिक बोझ से दबे स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक को सहयोग दिए बिना उस पर सारी व्याख्या की ज़िम्मेदारी डाल देना क्रूरता है। हमें सिद्धान्त-व्यवहार सम्बन्धों को अपनी चर्चा का विषय बनाने की ज़रूरत है। हम यह मानकर नहीं चल सकते कि विद्यार्थी स्वयं यह सम्बन्ध स्थापित कर लेंगे।

पाठ योजनाओं में सच्चे बदलाव करने के लिए बहुत सारे प्रयास की ज़रूरत है। इसके लिए स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक को पढ़ने का, चर्चा करने का तथा सोचने का वक्त चाहिए। इसलिए यह ज़रूरी है कि गैर-ज़रूरी ज़िम्मेदारियों को कम किया जाए तथा स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक को ज़रूरी बातों पर ध्यान देने के लिए समय दिया जाए। यह बहुत स्पष्ट है कि शिक्षक प्रशिक्षकों को इस कार्यक्रम के बारे में व्यापक रूप से तथा पाठ योजनाओं के बारे में खास तौर से गम्भीरता के साथ पुनर्विचार करने की ज़रूरत है।

शोभा सिन्हा: दिल्ली विश्वविद्यालय के शिक्षा विभाग में रीडर हैं। इनकी रुचि के शोध-विषय हैं: बढ़ती साक्षरता, साहित्य के प्रति लोगों की प्रतिक्रिया, कक्षा के सन्दर्भ में साक्षरता का अर्थ और निम्न सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि से आने वाले बच्चों का साक्षरता-सम्बन्धी विकास।
अँग्रेज़ी से अनुवाद: भरत त्रिपाठी: पत्रकारिता की पढ़ाई। स्वतंत्र लेखन और द्विभाषिक अनुवाद करते हैं। होशंगाबाद में निवास।

पिटारा कार्ट

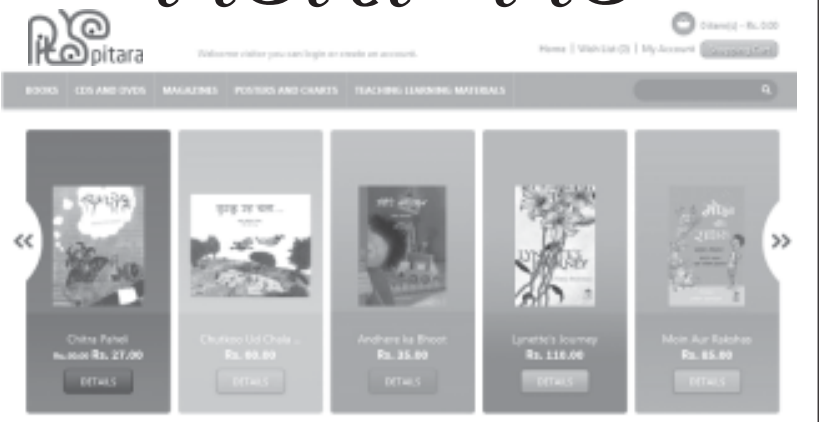

सिंगल क्लिक और आसान सर्च

एकलव्य की किताबें, पत्रिकाएँ, टी.एल.एम., शैक्षणिक सी.डी., चार्ट, पोस्टर एवं साइंस किट... आपकी पहुँच में...

जल्द ही देश भर की संस्थाओं और प्रकाशकों की चुनिन्दा सामग्री भी

www.pitarakart.in पर विज़िट कीजिए।
अपना अकाउंट बनाइए।
आसान खरीदारी और सुरक्षित भुगतान

विशेष ऑफर

पिटारा कार्ट द्वारा की गई ऑनलाइन खरीदी पर 100 रुपए की विशेष छूट।

एकलव्य
www.eklavya.in

सफेद गुड़

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

दुकान पर सफेद गुड़ रखा था। दुर्लभ था। उसे देखकर बार-बार उसके मुँह में पानी आ जाता था। आते-जाते वह ललचाई नज़रों से गुड़ की ओर देखता, फिर मनमसोसकर रह जाता।

आखिरकार उसने हिम्मत की और घर जाकर माँ से कहा। माँ बैठी फटे कपड़े सिल रही थी। उसने आँख उठाकर कुछ देर दीन दृष्टि से उसकी ओर देखा, फिर ऊपर आसमान की ओर देखने लगी और बड़ी देर तक देखती रही। बोली कुछ नहीं। वह चुपचाप माँ के पास से चला गया। जब माँ के पास पैसे नहीं होते तो वह इसी तरह देखती थी। वह यह जानता था।

वह बहुत देर गुमसुम बैठा रहा, उसे अपने वे साथी याद आ रहे थे जो उसे चिढ़ा-चिढ़ाकर गुड़ खा रहे थे। ज्यों-ज्यों उसे उनकी याद आती, उसके भीतर गुड़ खाने की लालसा और तेज़ होती जाती। एकाध बार उसके मन में माँ के बटुए से पैसे चुराने का भी खयाल आया। यह खयाल आते ही वह अपने को धिक्कारने लगा और इस बुरे खयाल के लिए ईश्वर से क्षमा माँगने लगा।

उसकी उम्र ग्यारह साल की थी। घर में माँ के सिवा कोई नहीं था। हालाँकि माँ कहती थी कि वे अकेले नहीं हैं, उनके साथ ईश्वर है। वह चूँकि माँ का कहना मानता था इसलिए उसकी यह बात भी मान लेता था। लेकिन ईश्वर के होने का उसे पता नहीं चलता था। माँ उसे तरह-तरह से ईश्वर के होने का यकीन दिलाती। जब वह बीमार होती, तकलीफ में कराहती तो ईश्वर का नाम लेती और जब अच्छी हो जाती तो ईश्वर को धन्यवाद देती। दोनों घण्टों आँख बन्द कर बैठते। बिना पूजा किए हुए वे खाना नहीं खाते। वह रोज़ सुबह-शाम अपनी छोटी-सी घण्टी लेकर, पालथी मारकर संध्या करता। उसे संध्या के सारे मंत्र याद थे, उस समय से ही जब उसकी ज़बान तोतली थी। अब तो वह साफ बोलने लगा था।

वे एक छोटे-से कस्बे में रहते थे। माँ एक स्कूल में अध्यापिका थी। बचपन से ही वह ऐसी कहानियाँ माँ से सुनता था जिनमें यह बताया जाता था कि ईश्वर अपने भक्तों का कितना खयाल रखते हैं। और हर बार ऐसी कहानी सुनकर वह ईश्वर का सच्चा भक्त बनने की इच्छा से भर जाता। दूसरे भी उसकी पीठ ठोंकते, और कहते, "बड़ा शरीफ लड़का है। ईश्वर उसकी मदद करेगा।" वह भी जानता था कि ईश्वर उसकी मदद करेगा। लेकिन कभी इसका कोई सबूत उसे नहीं मिला था।

उस दिन जब वह सफेद गुड़ खाने के लिए बेचैन था तब उसे ईश्वर याद आया। उसने खुद को धिक्कारा, उसे माँ से पैसे माँगकर माँ को दुखी नहीं करना चाहिए था। ईश्वर किस दिन के लिए है? ईश्वर का खयाल आते ही वह खुश हो गया। उसके अन्दर एक विचित्र-सा उत्साह भर आया क्योंकि वह जानता था कि ईश्वर सबसे अधिक ताकतवर है। वह सब जगह है और सब कुछ कर सकता है। ऐसा कुछ भी नहीं जो वह न कर सके। तो क्या वह थोड़ा-सा गुड़ नहीं दिला सकता? उसे जो कि बचपन से ही उसकी पूजा करता आ रहा है और जिसने कभी कोई बुरा काम नहीं किया। कभी चोरी नहीं की, किसी को सताया नहीं। उसने सोचा और इस भाव से भर उठा कि ईश्वर ज़रूर उसे गुड़ देगा।

वह तेज़ी-से उठा और घर के अकेले कोने में पूजा करने बैठ गया। तभी माँ ने आवाज़ दी, "बेटा, पूजा से उठने के बाद बाज़ार से नमक ले आना।"

उसे लगा जैसे ईश्वर ने उसकी पुकार सुन ली है। वरना पूजा पर बैठते ही माँ उसे बाज़ार जाने को क्यों कहती। उसने ध्यान लगाकर पूजा की, फिर पैसे और झोला लेकर बाज़ार की ओर चल दिया।

घर से निकलते ही उसे खेत पार करने पड़ते थे, फिर गाँव की गली जो ईंटों की बनी हुई थी, फिर बाज़ार की ओर चल दिया।

उस समय शाम हो गई थी। सूरज

डूब रहा था। वह खेतों में चला जा रहा था, आँखें आधी बन्द किए, ईश्वर पर ध्यान लगाए और संध्या के मंत्रों को बार-बार दोहराते हुए। उसे याद नहीं उसने कितनी देर में खेत पार किए, लेकिन जब वह गाँव की ईंटों की गली में आया तब सूरज डूब चुका था और अँधेरा छाने लगा था। लोग अपने-अपने घरों में थे। धुआँ उठ रहा था। चौपाए खामोश खड़े थे। नीम सर्दी के दिन थे।

उसने पूरी आँख खोलकर बाहर का कुछ भी देखने की कोशिश नहीं की। वह अपने भीतर देख रहा था जहाँ अँधेरे में एक झिलमिलाता प्रकाश था। ईश्वर का प्रकाश और उस प्रकाश के आगे वह आँखें बन्द किए मंत्र पाठ कर रहा था।

अचानक उसे अज़ान की आवाज़ सुनाई दी। गाँव के सिरे पर एक छोटी-सी मसजिद थी। उसने थोड़ी-सी आँखें खोलकर देखा। अँधेरा काफी गाढ़ा हो गया था। मसजिद के एक कमरे बराबर दालान में लोग नमाज़ के लिए इकट्ठे होने लगे थे। उसके भीतर एक लहर-सी आई। उसके पैर ठिठक गए। आँखें पूरी बन्द हो गईं। वह मन-ही-मन कह उठा, "ईश्वर यदि तुम हो और सच्चे मन से तुम्हारी पूजा की है तो मुझे पैसे दो, यहीं इसी वक्त।"

वह वहीं गली में बैठ गया। उसने ज़मीन पर हाथ रखा। जमीन ठण्डी थी। हाथों के नीचे कुछ चिकना-सा महसूस हुआ। उल्लास की बिजली-सी उसके शरीर में दौड़ गई। उसने आँखें खोलकर देखा। अँधेरे में उसकी

हथेली में अठन्नी दमक रही थी। वह मन-ही-मन ईश्वर के चरणों में लोट गया। खुशी के समुद्र में झूलने लगा। उसने उस अठन्नी को बार-बार निहारा, चूमा, माथे से लगाया। क्योंकि वह एक अठन्नी ही नहीं थी, उस गरीब पर ईश्वर की कृपा थी। उसकी सारी पूजा और सच्चाई का ईश्वर की ओर से इनाम था। ईश्वर ज़रूर है, उसका मन चिल्लाने लगा। भगवान मैं तुम्हारा बहुत छोटा-सा सेवक हूँ। मैं सारा जीवन तुम्हारी भक्ति करूँगा। मुझे कभी मत बिसराना। उलटे-सीधे शब्दों में उसने मन-ही-मन कहा और बाज़ार की तरफ दौड़ पड़ा। अठन्नी उसने ज़ोर से हथेली में दबा रखी थी।

जब वह दुकान पर पहुँचा तो लालटेन जल चुकी थी। पंसारी उसके सामने हाथ जोड़े बैठा था। थोड़ी देर में उसने आँख खोली और पूछा, "क्या चाहिए?"

उसने हथेली में चमकती अठन्नी देखी और बोला, "आठ आने का सफेद गुड़।"

यह कहकर उसने गर्व से अठन्नी पंसारी की तरफ गद्दी पर फेंकी। पर यह गद्दी पर न गिर उसके सामने रखे धनिए के डिब्बे में गिर गई। पंसारी ने उसे डिब्बे में टटोला पर उसमें अठन्नी नहीं मिली। एक छोटा-सा खपड़ा (चिकना पत्थर) ज़रूर था जिसे पंसारी ने निकालकर फेंक दिया।

उसका चेहरा एकदम से काला पड़ गया। सिर घूम गया। जैसे शरीर का खून निकल गया हो। आँखें छलछला आईं।

"कहाँ गई अठन्नी!" पंसारी ने भी हैरत से कहा।

उसे लगा जैसे वह रो पड़ेगा। देखते-देखते सबसे ताकतवर ईश्वर की उसके सामने मौत हो गई थी। उसने मरे हाथों से जेब से पैसे निकाले, नमक लिया और जाने लगा।

दुकानदार ने उसे उदास देखकर कहा, "गुड़ ले लो, पैसे फिर आ जाएँगे।"

"नहीं," उसने कहा और रो पड़ा।

"अच्छा पैसे मत देना। मेरी ओर से थोड़ा-सा गुड़ ले लो," दुकानदार ने प्यार से कहा और एक टुकड़ा तोड़कर उसे देने लगा। उसने मुँह फिरा लिया और चल दिया। उसने ईश्वर से माँगा था, दुकानदार से नहीं। दूसरों की दया उसे नहीं चाहिए।

लेकिन अब वह ईश्वर से कुछ नहीं माँगता।

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना (1927-1983): जाने-माने हिन्दी के लेखक, कवि, कहानीकार, समीक्षक थे। *खूटियों पर टंगे लोग* नामक कविता संग्रह के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित। ये उन सात कवियों में से एक थे जिनको *तार सप्तक* पत्रिका ने छापा था, जिससे प्रयोगवाद युग की शुरुआत हुई और जिसने आगे जाकर नई कविता आन्दोलन का रूप ले लिया।

सभी चित्र: तनुश्री: आई.डी.सी., आई.आई.टी. बॉम्बे से एनीमेशन में स्नातकोत्तर। स्वतंत्र रूप से एनीमेशन फिल्में बनाती हैं और चित्रकारी करती हैं।

सवालीराम

सवाल: दर्द निवारक दवाएँ कैसे काम करती हैं?

जवाब: दर्द होता क्या है? सभी जानते हैं क्योंकि हम सभी ने कभी-न-कभी दर्द को महसूस किया है। कुछ दर्द ऐसे होते हैं जो चोट लगने पर एकदम बहुत तेज़ होते हैं पर जैसे ही चोट ठीक होती है तो दर्द भी ठीक हो जाता है। और कुछ दर्द दीर्घकालिक होते हैं मतलब लम्बे समय तक चलते हैं जो हल्के भी हो सकते हैं और तीक्ष्ण भी। कई बार दर्द इतना तीव्र होता है कि क्षतिग्रस्त हिस्से को हिलाया भी नहीं जा सकता। और इन्हीं दर्द से निजात पाने के लिए हम सेवन करते हैं दर्द निवारक दवाओं का।

दर्द का कारण पता लगने और उसका इलाज होने तक मरीज़ को राहत प्रदान करने में दर्द निवारक दवाओं की अहम भूमिका होती है। ये दवाएँ केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र[1] (central nervous system) और परिधीय तंत्रिका तंत्र[2] (peripheral nervous system) पर विभिन्न तरीकों से काम करती हैं। पहले देखते हैं कि ये कितने प्रकार की होती हैं।

दर्द निवारक दवाएँ तीन तरह की होती हैं - गैर-स्टीरॉइड सूजनरोधी दवाइयाँ (नॉन स्टीरॉइडल एंटी-इंफ्लेमेट्री ड्रग्ज़ - NSAIDs), पैरासीटामॉल और ओपीऑइड्स (opioids) - दुनिया की सबसे पुरानी दवाओं में से एक जैसे मॉर्फीन जो अफीम की तरह काम करती है। इनका कई तरह से सेवन किया जाता है जैसे सीरप, गोली या कैप्सूल के रूप में मुँह से, या इंजेक्शन के द्वारा आदि। इनके अलावा दर्द निवारक दवाएँ क्रीम या मरहम के रूप में भी होती हैं। इनके बारे में आगे बात करेंगे। ये सभी दवाएँ अलग-अलग तरह से काम करती हैं।

दर्द निवारकों की कार्यप्रणाली

आइए समझते हैं कि ये विभिन्न प्रकार की दर्द निवारक दवाएँ काम कैसे करती हैं।

NSAIDs - इन दवाइयों की सलाह तब दी जाती है जब मरीज़ को तेज़ दर्द और सूजन हो। ये सूजनरोधी दर्द निवारक दवाएँ गठिया रोग, मोच, सर-दर्द और माइग्रेन आदि के दर्द, सूजन और जलन का इलाज करने में

[1] *कशेरुकी तंत्रिका तंत्र (vertebrate nervous system) का वो भाग जो मस्तिष्क और रीढ़ से बना होता है और जीवों की गतिविधियों को नियंत्रित और निर्देशित करता है।*

[2] *कशेरुकी तंत्रिका तंत्र का वो भाग जो केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र के बाहर स्थित रहता है।*

NSAIDs का दुष्प्रभाव

सूजनरोधी दर्द निवारक दवाओं के उपयोग से कभी-कभी आमाशय में अन्दरूनी रक्तस्त्राव होने लगता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि ये दर्द निवारक दवाएँ जिस रसायन (प्रोस्टाग्लेंडिंस) के बनने को कम करती हैं वे रसायन आमाशय के अन्दर पाए जाने वाले अम्लों के गम्भीर प्रभावों से आमाशय को बचाने में मदद भी करते हैं। इसलिए जिनको आमाशय में छाले होते हैं उनके लिए डॉक्टर इस दर्द निवारक दवाई का उपयोग करने की सलाह नहीं देते हैं।

बहुत बढ़िया भूमिका निभाती हैं। इस तरह की दवाओं में आईब्यूप्रोफिन, डाइक्लोफेनेक और नेप्रोज़ेन मिले होते हैं। एस्पिरिन भी इसी का एक उदाहरण है। आईब्यूप्रोफिन और एस्पिरिन शरीर के बढ़े हुए तापमान को कम करने के लिए भी इस्तेमाल किए जाते हैं (वैसे एस्पिरिन का उपयोग खून को जमने से रोकने के लिए भी किया जाता है)। NSAIDs साइक्लो-ऑक्सीजिनेज़ (COX) एंज़ाइम के प्रभाव को बाधित कर देते हैं। साइक्लो-ऑक्सीजिनेज़ एंज़ाइम प्रोस्टाग्लेंडिंस नामक रसायन को बनाने में मदद करते हैं। ये रसायन ज़ख्म वाले स्थान पर दर्द और सूजन उत्पन्न करते हैं। जैसे ही प्रोस्टाग्लेंडिंस के उत्पादन में कमी आती है, दर्द, सूजन और जलन भी कम हो जाती है।

पैरासीटामॉल - पैरासीटामॉल भी दर्द निवारक के रूप में इस्तेमाल किया जाता है और उच्च तापमान को कम करने में भी। लेकिन इससे सूजन पर कोई असर नहीं होता। इसलिए सामान्यतः पैरासीटामॉल की सलाह तब दी जाती है जब दर्द बहुत गम्भीर न हो और मरीज़ को सूजन न हो। ऐसा माना जाता है कि पैरासीटामॉल भी साइक्लो-ऑक्सीजिनेज़ एंज़ाइम को दिमाग और मेरुदण्ड (केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र) में अवरोधित कर देता है।

माना जाता है कि पैरासीटामॉल एक सुरक्षित दर्द निवारक दवाई है लेकिन यदि इसका बहुत अधिक मात्रा में सेवन किया जाए तो स्थाई रूप से लीवर को क्षति पहुँच सकती है जिससे जान भी जा सकती है।

ओपीऑइड्स - ओपीऑइड्स हमारे केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र, हमारी आँत और शरीर के अन्य भागों में कुछ खास ग्राहियों (opioid receptors) से जुड़ जाते हैं। इस वजह से हम जिस तरह से दर्द महसूस करते हैं और दर्द के प्रति जो हमारी प्रतिक्रिया होती है उसमें कमी आ जाती है, और दर्द के प्रति सहनशीलता बढ़ती है। ओपीऑइड्स का इस्तेमाल सामान्यतः गम्भीर दर्द से निवारण के लिए किया जाता है जैसे केंसर से सम्बन्धित दर्द या ऑपरेशन के बाद होने वाला दर्द या जब कोई गम्भीर चोट आई हो।

उबकाई आना, उलटी होना, मुँह सूखना, कब्ज़ होना, सुस्ती होना, घबराहट होना इन दवाइयों के सामान्य दुष्प्रभाव हैं।

ये दर्द निवारक दवाएँ ओपिएट ग्राहियों (opiate receptors) से जुड़कर दिमाग को होने वाली दर्द की अनुभूति को बाधित कर देती हैं। इससे केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र द्वारा दिमाग को भेजे जाने वाले संकेतों में बाधा आती है। नींद लाने वाली दर्द निवारक दवाएँ अवसादक (depressant) होती हैं, मतलब ये केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र पर होने वाले असर को दबा देती हैं और आराम की अनुभूति बढ़ाते हुए दर्द की अनुभूति को कम कर देती हैं।

कुछ दर्द निवारक दवाएँ अन्य दूसरी दवाइयों की कार्यप्रणाली (जिसका सेवन मरीज़ कर रहा हो) को भी प्रभावित कर सकती हैं। इससे इन दवाइयों का एक-दूसरे पर रासायनिक प्रभाव भी हो सकता है या फिर अन्य दूसरे चल रहे इलाज का असर भी कम हो सकता है। इसलिए यदि आप अन्य दवाइयों का सेवन भी कर रहे हैं तो दर्द निवारक दवाई की सलाह लेते वक्त इसकी जानकारी डॉक्टर को ज़रूर दे देनी चाहिए।

टॉपिकल दर्द निवारक

जैसा कि हमने पहले बात की थी कि क्रीम या मरहम को भी दर्द निवारक के रूप में इस्तेमाल किया जाता है जिन्हें टॉपिकल सूजनरोधी दर्द निवारक कहा जाता है। मतलब, जिसे हम

तंत्रिकासंचारक व दर्द निवारक दवा

नशीली दर्द निवारक दवाएँ ओपिएट ग्राहियों, जो विशिष्ट रूप से तंत्रिकासंचारक (neurotransmitters - रसायन) से बँधी रहती हैं, से जुड़ जाती हैं। इन दर्द निवारक दवाओं के लम्बे समय तक सेवन से शरीर द्वारा स्वाभाविक रूप से होने वाले रसायनों का उत्पादन धीमा हो जाता है और दर्द से खुद-ब-खुद राहत पाने की शरीर की क्षमता कम हो जाती है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि नशीली दर्द निवारक दवाओं की मौजूदगी के कारण शरीर को लगता है कि पर्याप्त मात्रा में रसायन उत्पन्न हो चुके हैं क्योंकि शरीर में तंत्रिकासंचारक की प्रचुरता बढ़ जाती है। मौजूदा तंत्रिकासंचारकों के पास जुड़ने के लिए कुछ नहीं होता, क्योंकि ओपिएट ग्राहियों पर तंत्रिकासंचारकों की जगह ये दवाइयाँ ले लेती हैं। इस वजह से शरीर में स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होने वाले तंत्रिकासंचारकों का स्तर गिर जाता है और शरीर की दर्द निवारक दवाओं के प्रति सहनशीलता बढ़ जाती है जिस वजह से समान असर पैदा करने के लिए दवाई की ज़्यादा मात्रा लेने की ज़रूरत पड़ती है। इन दवाओं की ज़्यादा मात्रा मरीज़ को इनकी लत की ओर भी ले जा सकती है। कम असरदार ओपीऑइड्स के कुछ उदाहरण हैं - कोडीन और डाइहाइड्रोकोडीन। अधिक असरदार ओपीऑइड्स के उदाहरण हैं - मॉर्फीन, ऑक्सीकोडोन, पेथीडाइन और ट्रेमाडोल।

किसी विशेष स्थान सम्बन्धी दर्द होने पर त्वचा पर लगाते हैं। इनसे मांसपेशियों के दर्द, मोच और जकड़न के दर्द में आराम मिलता है। गठिया रोग के दर्द में भी इसका इस्तेमाल किया जाता है। कभी-कभी डॉक्टर गोली के रूप में ली जाने वाली दर्द निवारक दवाइयों की बजाए टॉपिकल सूजनरोधी दर्द निवारक की सलाह देते हैं क्योंकि इनके दुष्प्रभाव बहुत कम होते हैं। अध्ययन बताते हैं कि टॉपिकल दर्द निवारक भी टेबलेट के बराबर ही असरदार होती है।

टॉपिकल एंटी-इंफ्लेमेट्री जैल, स्प्रे और क्रीम के रूप में उपलब्ध होती हैं। ये शोथरोधी दवाइयों जैसे आईब्यूप्रोफिन, डाइक्लोफेनेक, कीटोप्रोफिन से युक्त होती हैं और कई ब्रैंड नामों से उपलब्ध होती हैं।

टॉपिकल सूजनरोधी दवाइयाँ भी अन्य दर्द निवारकों की तरह ही काम करती हैं लेकिन पूरे शरीर पर असर करने की बजाय ये सिर्फ उस जगह पर काम करती हैं जहाँ हमने उसे लगाया है। जब हम लगाते हैं तो हमारी त्वचा इन्हें सोख लेती है। फिर ये शरीर में जहाँ दर्द या सूजन है वहाँ गहराई से जाकर काम करती हैं। जोड़ों और मांसपेशियों पर असर करते हुए ये दर्द से राहत दिलाती हैं और सूजन में भी कमी लाती हैं।

अध्ययन बताते हैं कि इस तरह की क्रीम या जैल का उपयोग करने का मतलब है कि शोथरोधी की बहुत कम मात्रा हमारे शरीर में जा रही है जिसका मतलब यह हुआ कि हमारे लिए इस दवाई के साइड इफेक्ट की सम्भावना भी बहुत कम हो जाती है।

अब देखते हैं कि टॉपिकल दर्द निवारक में सामान्य रूप से पाए जाने वाले घटक कौन से हैं और वो कैसे असर करते हैं:

काउंटर इरिटेंट: मेंथॉल, कपूर, मिथाइल सेलिसायलेट जैसे तत्वों को काउंटर इरिटेंट कहते हैं। इन्हें लगाने से जलन या ठण्डक की अनुभूति होती है जिस वजह से दर्द से हमारा ध्यान भटक जाता है।

सेलिसायलेट: वही सब घटक जो एस्पिरिन को दर्द निवारक होने का गुण प्रदान करते हैं, कुछ क्रीमों में भी पाए जाते हैं। जब त्वचा इसे सोख लेती है तो दर्द में राहत मिलती है, विशेषकर त्वचा के करीब वाले जोड़ों में जैसे उँगलियाँ, घुटने और कुहनी।

केपसेसिन: तीखी काली मिर्ची में पाया जाने वाला मुख्य घटक केपसेसिन, टॉपिकल दर्द निवारक के भी सबसे असरदार घटकों में से एक है। जब केपसेसिन क्रीम को पहली

स्टीरॉइड्स

इसके अलावा स्टीरॉइड्स भी दर्द निवारक के रूप में लिए जाते हैं। यह बहुत अहम और शक्तिशाली दवाइयों का समूह होता है। वैसे ये शरीर में प्राकृतिक तौर पर हार्मोन के रूप में पाए जाते हैं पर इन्सान इन्हें प्रयोगशालाओं में कृत्रिम रूप से बनाकर, दवाई के रूप में इस्तेमाल करते हैं। स्टीरॉइड्स सूजन के स्थानीय लक्षणों जैसे दर्द, सूजन के स्थान पर गर्मी और लालिमा को कम करते हैं। इन्हें मुँह के द्वारा, इंजेक्शन द्वारा ले सकते हैं और मलहम के रूप में भी इस्तेमाल कर सकते हैं। रुमेटिक गठिया जैसे रोगों में इससे दर्द में काफी राहत मिलती है या एक्ज़ीमा जैसे रोग में मलहम के रूप में। कृत्रिम स्टीरॉइड्स शरीर के कुदरती प्रतिरक्षा तंत्र को खराब करते हैं जिससे शरीर में विभिन्न तरह के संक्रमणों का खतरा बढ़ जाता है। लम्बे समय तक स्टीरॉइड्स की अधिक मात्रा के सेवन से शरीर में कुदरती स्टीरॉइड्स का निर्माण कम हो जाता है। लेकिन इंजेक्शन या मुँह के द्वारा लिए गए स्टीरॉइड्स की तुलना में टॉपिकल स्टीरॉइड्स कम नुकसानदेह माने जाते हैं।

बार लगाया जाता है तो त्वचा पर एक सिहरन-सी या जलन की अनुभूति होती है। पर धीरे-धीरे ये जलन की अनुभूती कम होती जाती है। इसके असर को महसूस करने के लिए इस क्रीम को लगातार कुछ दिनों तक लगाना होता है।

तो हमने देखा कि ये सभी दर्द निवारक दवाएँ किस तरह से काम करती हैं। डॉक्टर आपको कौन-सी दर्द निवारक दवाई लेने की सलाह देगा ये इस पर निर्भर करता है कि किस तरह का और कितना गम्भीर दर्द आपको हो रहा है, या आपके लिए उस दवाई से सम्भव दुष्प्रभाव क्या हो सकते हैं।

इस जवाब को पारुल सोनी ने तैयार किया है।
पारुल सोनी: 'संदर्भ' पत्रिका से सम्बद्ध हैं।

■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■

इस बार का सवाल

सवाल: समुद्र में रहने वाले स्तनधारी जीव समुद्रीय खारा पानी कैसे पी पाते हैं?

इस सवाल के बारे में आप क्या सोचते हैं, आपका क्या अनुमान है, क्या होता होगा? इस सवाल को लेकर आप जो कुछ भी सोचते हैं, सही-गलत की परवाह किए बिना हमारे पास लिखकर भेज दीजिए।

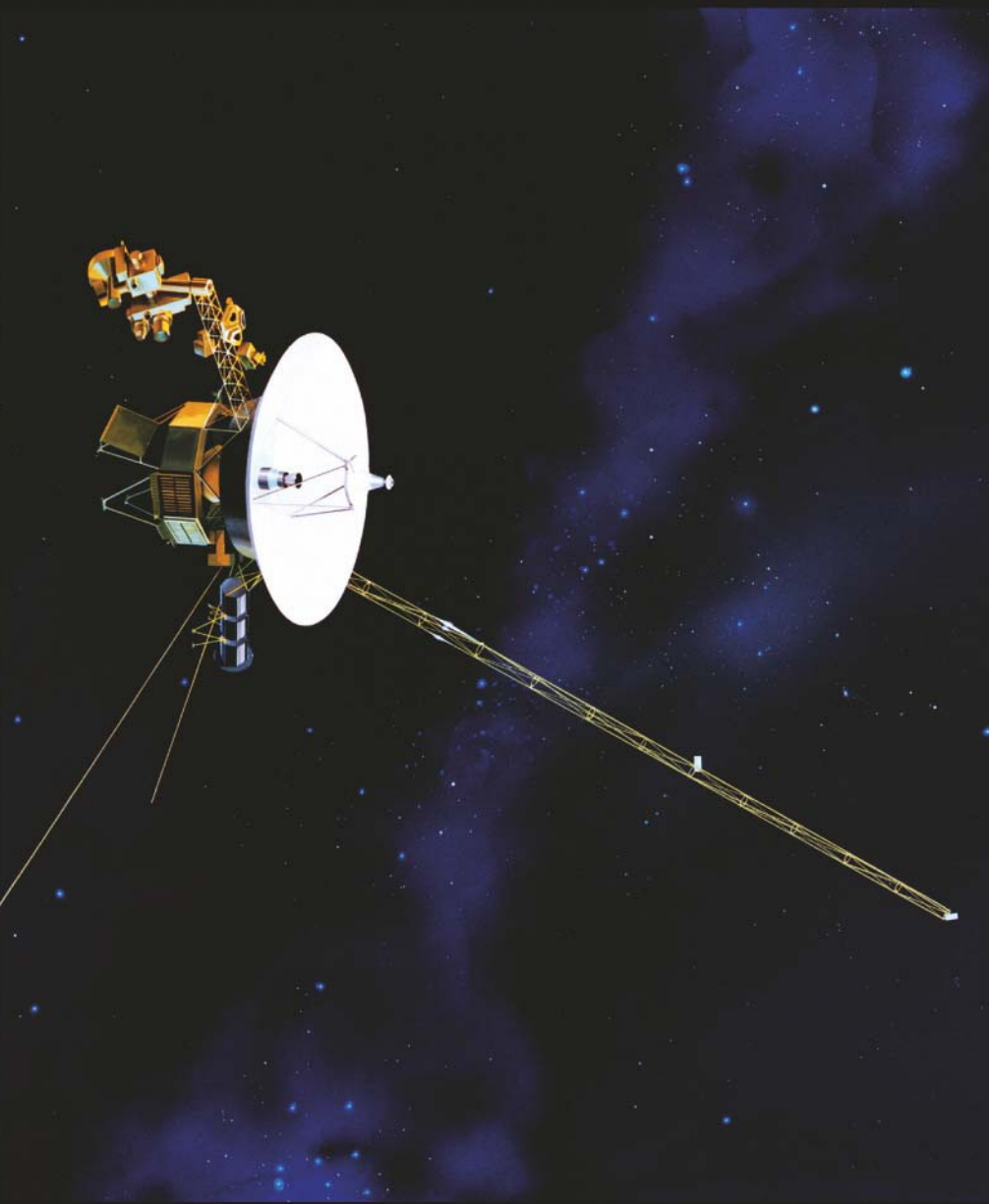

वोयेजर-1 - एक प्रोटोटाइप

RNI No. : MPHIN/2007/20203

प्रकाशक, मुद्रक, अरविन्द सरदाना की ओर से निदेशक एकलव्य फाउण्डेशन ई-10, शंकर नगर, वी.डी.ए. कॉलोनी, शिवाजी नगर, भोपाल-462 016 द्वारा
एकलव्य से प्रकाशित तथा भण्डारी ऑफसेट प्रिंटर्स, ई-3/12, अरेरा कॉलोनी, भोपाल-462016 (म.प्र.)
से मुद्रित, सम्पादकः राजेश खिदरी।